जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2530

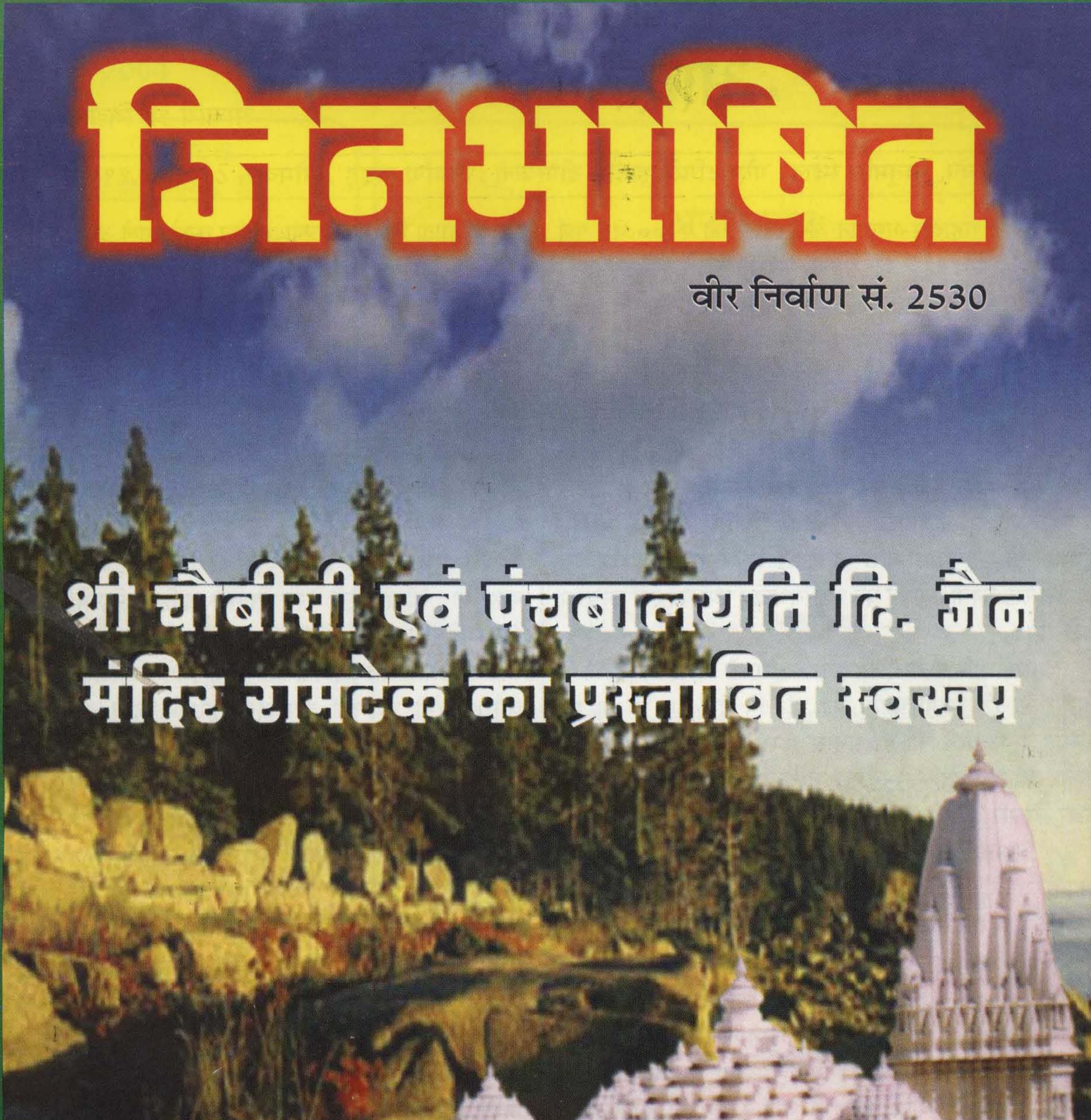

श्री चौबीसी एवं पंचबालयति दि. जैन मंदिर रामटेक का प्रस्तावित स्वरूप

चैत्र, वि.सं. 2061

मार्च 2004

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदर्श त्यागी बनें

आचार्य श्री विद्यासागर जी

प्रवचन, चातुर्मास स्थल : गोम्मटगिरी, इन्दौर, दीपावली : निर्वाण लड्डू , सोमवार, ८ नवम्बर १९९९

आज महावीर भगवान के निर्वाण को २५०० वर्ष पूर्ण हो गये हैं। अब तक जो श्रमण-परम्परा चली है, वह उसी वीतराग परम्परा का प्रतीक है। यद्यपि महावीर भगवान् हमारे बीच नहीं हैं किन्तु उन्होंने आत्मा के स्वरुप को प्राप्त करने के लिये जो साधना अपनाई और उस साधना के जो चिन्ह विद्यमान हैं, उन्हें वे हमारे पास छोड़कर चले गये हैं। आज दुनिया में जो रास्ता बनाता है और आगे बढ़ता है उसे वह स्वयं समेट कर ले जाता है, क्योंकि उसे उसने बनाया था। जैसे भवनों में लिफ्ट ऊपर चढ़ती है, तो अपना चिन्ह नहीं छोड़ती। वेसे ही महावीर भगवान् भी अपने साथ कुछ भी लेकर नहीं गये। अपना जो कुछ था उसे रख लिया। बाकी को यहाँ यथावत् ज्यों का त्यों छोड़कर चले गये।

ब्रह्मचारियों के लिये मेरा कहना है वे अपनी सीमा में रहकर के ही निष्परिग्रहता का परिचय देते हुए समाज को परिग्रह से उबारने का ही प्रयास करते रहें। समाज में किसी प्रकार का पक्षपात, क्षोभ और शैथिल्य न हो। '**सादा जीवन उच्च विचार**' वाली बात आना चाहिए।

ब्रह्मचारियों से आज मेरा विशेष रूप से कहना है कि वे अपनी सादगी को भूलें नहीं। वैराग्य को भूलें नहीं। अपने पहनावे में परिवर्तन न लावें। गाँधी जी जैसे सादगी से घुटने तक पहनकर रहते थे, उसी प्रकार पहना करें। सादगी इसी में है। लोग कहते हैं कि महाराज! आप किसी को कुछ कहते नहीं। मैं कहता हूँ, बात आपको पता नहीं है। इसीलिये आज कह रहा हूँ कि आप मर्यादा कायम रखें। त्यागी मर्यादा भंग करता है, तो गृहस्थ उससे भी ज्यादा करता है क्योंकि उसकी कोई मर्यादा होती ही नहीं है। संयम की रेखा तो हमारी रहती है। त्यागी किसी भी प्रकार से अपनी आत्म-गौरव, मूल्य व सीमा नहीं खोएँ। समाज को कुछ देना चाहते हैं, तो यही मार्ग सही है। गुरुवर ज्ञानसागर जी ने मुझसे कहा था कि यदि ब्रह्मचारी एक-दो प्रतिमा वाला भी हो, तो समाज को हिला सकता है। पूरा समाज उसकी ओर आकृष्ट हो सकता है। चाहिए उसके पास सादगी। दो प्रतिमाधारी भी समाज में बहुत काम करके गये हैं। अगर आगे की प्रतिमाएँ ले लें, किन्तु सादगी नहीं रखें, पैसे और लोभ-लालच के साथ रहें, मोटर-गाड़ी के साथ आना-जाना हो, तो गड़बड़ है। आज तो सबसे ज्यादा मोटर गाड़ियों का उपयोग होने लगा है।

सादगी की दृष्टि से आरम्भ त्याग प्रतिमा है । बहुत अनिवार्य हो, तो वाहन में बैठो। आज वाहन तो क्या रेल में, बस में भी कोई नहीं जाता। ए.सी. (एयर कण्डीशन) कार चाहिए। उसमें ब्रह्मचारियों की यात्रा होती है। यह सुन जानकर मुझे बहुत विचार आता है। सबसे ज्यादा फोन करने वाले आज त्यागी हो गये हैं। ये कौन हैं? किस आधार पर इनके फोन चलते हैं? इनकी कोई बिजली की दुकान या मकान है। किसलिये इनको इसकी (फोन की) क्या आवश्यकता है? ये सब बातें मैं इसलिये कह रहा हूँ, त्यागी को कह सकता हूँ, गृहस्थों को नहीं। मेरे पास त्यागी एक नहीं बहुत सारे हैं। इसलिये इन्हें अपनी मर्यादा कायम रखना अनिवार्य है।

आप कह सकते हैं कि महाराज! आपको आज क्या हो गया है? हमने बहुत सी बातें कानों से सुनी और आँखों से देखी भी हैं। इसलिये कह रहा हूँ। गुरुवर ज्ञानसागर जी महाराज ने कहा था- 'देखो, ऐसे वस्त्र पहनना चाहिए, जिनमें से भीतरी अंग नहीं दिखे।' हाँ, बिल्कुल इसीप्रकार के वस्त्र ब्रह्मचारियों, ब्रह्मचारिणियों को पहनना चाहिए। उनमें टिनोपॉल, रानीपॉल वगैरह कभी भी नहीं लगाना चाहिए। निर्वाण लड्डू चढ़ाते समय आप लोग (ब्रह्मचारीगण) संकल्प लीजिये। नहीं लेंगे, हम आप लोगों से बातें नहीं करेंगे। बिल्कुल (संकल्प लीजिये) इसमें क्या बात हो गयी? हमारे निर्देशन का पालन करो, करके दिखाओ। बिल्कुल मैं ऐसा ही करता था महाराज (ज्ञानसागरजी) प्रसन्न होते थे। मैं कहता था- 'महाराज! मुझे तो जल्दी-जल्दी (वस्त्र) उतारना है। इनको क्या पहनना?' इन्हें अंग ढकने व मर्यादा रखने के लिये पहनना चाहिए। इनमें कोई आकर्षण नहीं, सादगी होना चाहिए। दुनिया रागी है और आप वैराग्य पथ के उपासक हो।

गाँधीजी गृहस्थ आश्रम में रहते हुए साधु जैसे रहते थे। आज के त्यागियों को देखकर के ऐसा लगता है जैसे कोई रईस आ रहा हो। ऐसा क्यों है? वस्त्र स्वच्छ, साफ, निश्छिद्र रखिये। इसमें कोई बाधा नहीं है। मान लो वस्त्र फटने को हों, तो उसे पहले ही छोड़ दीजिये। इस व्यवस्था के लिये पहले से गृहस्थ लोग तैयार हैं। उनके पास दुकानें हैं, कपड़ों की कोई कमी नहीं है। लेकिन कपड़े कोई शोभा नहीं है।

आप कितनी वीतरागता के उपासक हैं? महावीर भगवान को लड्डू चढ़ाने का यही एकमात्र फल है। हम वीतरागता का मूल्यांकन करें। राग की ओर न जायें। गृहस्थ का राग समाप्त हो, इस प्रकार की प्रक्रिया करें। कल चातुर्मास समाप्त हो गया। मैं महावीर भगवान् से प्रार्थना करता हूँ- 'हे भगवन्! जैन-धर्म जो विश्व धर्म के रूप में है, उसकी प्रभावना में हमारा मन, वचन, काय लगा रहे और जो कोई भी व्यक्ति हैं उनके लिए भी मेरा यही कहना है।'

प्रस्तुति : निर्मल कुमार पाटोदी
२२, जाय बिल्डर्स कॉलोनी,
इन्दौर (म.प्र.) ४५२ ००३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल/588/2003

मार्च 2004

जिनभाषित

वर्ष 3, अङ्क 2

सम्पादक

प्रो. रतनचन्द्र जैन

◆

कार्यालय

ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा

भोपाल- 462 039 (म.प्र.)

फोन नं. 0755-2424666

◆

सहयोगी सम्पादक

पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया, (मदनगंज किशनगढ़)

पं. रतनलाल बैनाड़ा, आगरा

डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर

डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत

प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ

डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती', बुरहानपुर

◆

शिरोमणि संरक्षक

श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी

(मे. आर.के.मार्बल्स लि.)

किशनगढ़ (राज.)

श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर

◆

प्रकाशक

सर्वोदय जैन विद्यापीठ

1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,

आगरा-282002 (उ.प्र.)

फोन : 0562-2151428, 2152278

◆

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

◆ **आपके पत्र धन्यवाद** 2

◆ **सम्पादकीय** : नाटक का अनाट्यशास्त्रीय प्रयोग 3

◆ **प्रवचनांश**

- आदर्श त्यागी बनें : आ.श्री विद्यासागर जी आव.पृ.2
- मरण सुधारना अपने ... : मुनिश्री सुधासागर जी आव.पृ. 3

◆ **लेख**

- श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र रामटेक का इतिहास 5
- महाकवि आचार्य विद्यासागर कृत महाकाव्य मूक माटी में प्रकृति-चित्रण : सुरेश सरल 8
- क्या एकल विहार का आगम में सर्वथा निषेध है : पं. सुनील जैन 'शास्त्री' 12
- महावीर के सिद्धान्त : सुशीला पाटनी 13
- आत्मा और शरीर की भिन्नता : चिकित्सीय विज्ञान की साक्ष्य : डॉ. प्रेमचंद जैन 15
- महासभाध्यक्ष जी के नाम खुला पत्र : मूलचंद लुहाड़िया 21
- पशुपक्षी-बलि-प्रतिषेध अधिनियम हेतु अनुरोध 26

◆ **प्राकृतिक चिकित्सा**

- आरोग्यं शरणं गच्छामि : डॉ. वन्दना जैन 18

◆ **साहित्य समीक्षा** : डॉ. विमला जैन 20

◆ **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा 24

◆ **संस्मरण : सच्चा-रास्ता** : मुनिश्री क्षमासागर जी 20

◆ **कविता**

- जन्म कृतार्थ हो : डॉ. विमला जैन 11

◆ **समाचार** 28 -32

लेखक के विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

जिनभाषित से सम्बन्धित समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके पत्र, धन्यवाद : सुझाव शिरोधार्य

'जिनभाषित' का सम्पादकीय मन को छू गया। भट्टारकों पर आपकी समीचीन दृष्टि अत्यन्त उपादेय है। सराहनीय है।

भोपाल में १४,१५,१६,१७ एवं १८ मार्च २००४ को भगवान आदिनाथ कथा का आयोजन था। जिसमें आदिकुमार जी की बारात का भव्य जुलूस रात्रि में निकाला गया। यद्यपि यह जुलूस प्रात: निकालने का निश्चय किया गया था। न जाने क्यों समय परिवर्तन कर रात्रि में बारात का जुलूस निकाला गया। भोपाल में प्राय: 'दिन में शादी-दिन में भोज' की अहिंसक परम्परा का प्रचलन है। इसे ही जैनों को प्रश्रय देना चाहिए। बारात के रात्रि में निकालने वरमालादि का रात्रि में आयोजन के निषेध की व्यवस्था की इस उदाहरण ने कमर तोड़ दी है। जो नहीं होना चाहिए था वह हुआ।

श्रीपाल जैन 'दिवा'
एल-७५, हर्षवर्द्धन नगर, भोपाल

मैं 'जिनभाषित' पत्रिका का नियमित पाठक हूँ। 'जिनभाषित' पत्रिका जैन संस्कृति की उच्च कोटि की पत्रिका है, पत्रिका के नये अंक का परिवार के सभी सदस्यों को इंतजार रहता है।

भोपाल में मुनि श्री पुलक सागर जी महाराज का जैन समाज एवं अन्य समाज को उनके क्रांतिकारी प्रवचनों का लाभ मिल रहा है। सभी लोग प्रवचन के समय का बेसब्री से इंतजार करते हैं।

भोपाल में प्रथम बार 'ऋषभ कथा' का स्वयं मुनिश्री के कर कमलों से वाचन हुआ एवं काफी तादाद में धर्म प्रेमी बन्धुओं ने ज्ञान अर्जित किया।

परन्तु मुनिश्री के आदेशानुसार प्रथम तीर्थंकर ऋषभ देव भगवान की बारात निकाली गई जो शाम को ७ बजे प्रारम्भ होकर रात्रि ११ बजे स्थान पर पहुँची। जब रात्रि में महाराज स्वयं पैदल नहीं चलते तो क्या भगवान की बारात निकालना एक सुसज्जित रथ पर भगवान की मूर्ति को लेकर लगभग ४ घंटे तक बाजार के मुख्यमार्गों से गाजे-बाजे के साथ निकालना क्या उचित है? मेरे मन में जो शंका है मैं आपसे मार्ग दर्शन चाहता हूँ। मेरे जैसे और भी लोग हैं जो इस पर सही या गलत को लेकर वाद-विवाद कर रहे हैं।

आपका क्या सुझाव है, क्या विचार हैं। कृपया पत्रिका के माध्यम से अपने विचार देने का कष्ट करें।

दिनेश जैन
स्टेशन क्षेत्र, भोपाल

हमें 'जिनभाषित' पत्रिका बराबर मिल रही है। आपके द्वारा सम्पादित जिनभाषित में अच्छे विचार व समाचार आते हैं।

अभी हाल में भोपाल में आयोजित 'ऋषभ कथा' कार्यक्रम के दौरान राजकुमार आदिकुमार की बारात रात्रि में निकाली गई। साथ में भगवान की प्रतिमा भी थी। हमारे मुनिमहाराज जहाँ रात्रि में बारात एवं विवाह का निषेध करते हैं, वहीं इस प्रकार की बारात का आयोजन कहाँ तक उचित है? मार्ग दर्शन देने की कृपा करें।

शिखरचंद जैन
शंकराचार्य नगर, भोपाल

'जिनभाषित' पत्रिका की सामग्री देखकर मन आनन्द विभोर हो उठा, कई नये क्षेत्रों की जानकारी होती है, मेरे कुछ सुझाव हैं :

1. जैन समाज में निषिद्ध खाद्य आदि पदार्थों के बारे में भी लेख प्रकाशित किये जावें। जैसे : चाँदी के वर्क, पेप्सी, कोकाकोला, लिपस्टिक, सेन्ट, जिलेटिन वाले पदार्थों की जानकरी एवं उनके हानिकारक प्रभाव।

प्रेमचन्द्र जैन
सेवानिवृत प्रधानाचार्य
रामगंजमण्डी, जिला - कोटा, राजस्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

नाटक का अनाट्यशास्त्रीय प्रयोग

8 फरवरी 2004 को आचार्य श्री पुष्पदन्त सागर जी के शिष्य मुनिश्री पुलकसागर जी का भोपाल में पहली बार पदार्पण हुआ। उनकी भव्य अगवानी की गई। यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि बहुत पहले से ही उनके आगमन की सूचना देने के लिए भोपाल के मन्दिरों और सार्वजनिक स्थलों पर मुनिश्री के चित्रसहित रंगीन पोस्टर चिपका दिये गये थे, जिसमें उनकी भव्य अगवानी के कार्यक्रम की घोषणा की गयी थी। पोस्टर में मुनिश्री के नाम के साथ 'अलौकिक सन्त' और 'प्रखर वक्ता' की उपाधियाँ जुड़ी हुयी थीं। 'अलौकिक सन्त' का अर्थ बुद्धिगम्य नहीं हुआ, क्योंकि अलोक में कोई साधु नहीं रहता। सभी साधु लोक में ही रहते हैं। इसीलिए णमोकारमन्त्र में 'णमो लोए सव्वसाहूणं' कहा गया है। पोस्टर छपवानेवाले ने यह ध्यान नहीं रखा कि जब 'णमो लोए सव्वसाहूणं' कहा जायेगा तब अलौकिक (लोकसे बाहर का) साधु इस नमस्कार की सीमा में नहीं आ पायेगा। हाँ, लक्षणा से 'अलौकिक' शब्द का अर्थ 'मानवेतर शक्तियों अर्थात् दैवी या चमत्कारी शक्तियों से युक्त' होता है। शायद लोगों ने यही अर्थ समझा, जिससे उनके मन में मुनिश्री के दर्शन की इच्छा बलवती हो उठी। इसके अतिरिक्त पोस्टर में मुनिश्री का भोपालवासियों के नाम यह सन्देश भी छपा था कि 'मुझे भोपाल में आपसे कुछ कहना है।' लोगों ने सोचा : मुनिश्री इतनी दूर से अपने-आप हमसे कुछ कहने के लिए आ रहे हैं। इसके पूर्व किसी मुनि ने हमसे कुछ कहने की इच्छा प्रकट नहीं की। अवश्य ही इनके मन में हमारे प्रति तीव्र वात्सल्यभाव है। इस वात्सल्यभाव की अनुभूति ने श्रावकों के हृदय में मुनिश्री के प्रति आकर्षण द्विगुणित कर दिया। तथा उनके मन में यह भी आया कि मुनिजी भोपालवासियों से ऐसा 'कुछ' कहने आ रहे हैं, जो इसके पहले आये किसी मुनि ने नहीं कहा। इस भावना ने भी मुनिश्री के दर्शन की आकांक्षा को उत्कर्ष पर पहुँचा दिया।

निस्सन्देह मुनिश्री की अगवानी के लिए भारी भीड़ जुटी। और उसके बाद तो उनके प्रवचनों में जनसैलाब उमड़ पड़ा। मुनिश्री की प्रवचनशैली ओजस्विनी है, जो श्रोताओं की हृदयतन्त्री को झंकृत किये बिना नहीं रहती। मुनिश्री ने भोपालवासियों से जो कुछ कहा वह सचमुच अनोखा था। उन्होंने कहा, 'गतवर्ष आपके शहर में आचार्य श्री विद्यासागर जी आये थे, वे शांति के दूत हैं। इस वर्ष मैं आया हूँ, किन्तु मैं क्रान्तिदूत हूँ। आचार्य विद्यासागर जी ने युवकों को मुनि बनाया है, लेकिन मेरे गुरु ने बालकों को मुनि बनाया है।' मुनिश्री ने एक बड़ी साहसपूर्ण स्वीकारोक्ति की। उन्होंने कहा, ''हममें केवल दस प्रतिशत शिथिलाचार है, शेष आचरण भगवान महावीर के समान है।'' मैं आज तक यह नहीं समझ पाया कि अट्ठाईस मूल गुणों का कितना-कितना पालन न करने पर दस प्रतिशत शिथिलाचार होता है? क्या ऐसा है कि बिलकुल न नहाने पर 'अस्नान' मूलगुण का शत-प्रतिशत पालन होता है और थोड़ा सा नहा लेने पर दस-प्रतिशत शिथिलाचार होता है? कभी भी दन्तधावन न करने पर 'अदन्तधावन' मूलगुण का सौ फीसदी पालन होगा और कभी-कभी दन्तधावन कर लेने पर दस प्रतिशत शिथिलाचार होगा? तो क्या कभी-कभी नहा लेने या दन्तधावन कर लेनेवाला मुनि 'मुनि' कहला सकता है? क्या कोई स्त्री नब्बे प्रतिशत व्यभिचार न करे और दस प्रतिशत करे, तो वह सती कहला सकती है? नहीं, इसलिए मैं तो उक्त मुनिश्री में एक प्रतिशत भी शिथिलाचार नहीं मानता।

मुनिश्री ने भोपाल से एक नए धार्मिक उत्सव की शुरुआत की है। वह है हिन्दुओं में रामकथा, भागवतकथा आदि के वाचन के समान दिगम्बर जैन परम्परा में ऋषभकथा का वाचन। किन्तु हिन्दुओं में कथावाचन का कार्य साधुसन्त नहीं, पण्डित महाराज करते हैं। साधुसन्त तो ब्रह्म, जीव, माया, प्रकृति और पुरुष जैसे गूढ़ दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन करते हैं। जैनपरम्परा में साधुसन्त तत्त्वार्थसूत्र, सर्वार्थसिद्धि रत्नकरण्डश्रावकाचार, समयसार, इष्टोपदेश जैसे तात्त्विक एवं आध्यात्मिक ग्रन्थों का अर्थ समझाते हैं। पद्मपुराण, महापुराण जैसे कथाग्रन्थों का वाचन तो रात्रि में पण्डितों-द्वारा मन्दिरों में प्रतिदिन किया जाता है और मुनिजन भी अपने प्रवचनों में यथाप्रसंग इन कथाओं का वर्णन अपनी शैली में करते ही हैं। फिर यह मुनियों के द्वारा पृथक् से कथावाचन जैसा जैनेतर प्रयोग मुनिधर्म के कहाँ तक अनुकूल है, यह विचारणीय है।

भोपाल में जो ऋषभकथा का वाचन हुआ है, वह केवल कथावाचन नहीं था, अपितु कथावाचन और नाटक का मिश्रित रूप था। नाटक भी पूरी तरह रंगमंचीय नहीं था, आधा सड़कीय था, आधा रंगमंचीय। महाराज नाभिराय के राजमहल जाकर भेंट अर्पित करना तथा उन्हें जुलूस में अयोध्यापुरी लाना तथा एकदिन के बाद श्री आदिकुमार की बारात निकालना और नगरभ्रमण करते हुए उनकी ससुराल जाना, इन दो घटनाओं का नाटक भोपाल नगर की सड़कों पर किया गया तथा आदिकुमार का जन्म, बालक्रीडाएँ, वैराग्य एवं भरत- बाहुबली के युद्ध का अभिनय रवीन्द्र-भवन के खुले मंच पर दिखलाया गया।

सड़क-नाटक में जैन-जैनेतरों में एक गलत सन्देश पहुँचानेवाला अनाट्यशास्त्रीय प्रयोग हो गया। श्री आदिकुमार की बारात रात्रि में 8:30 बजे जैन धर्मशाला चौक से निकाली गई और बारात का विशाल जुलूस विद्युत ट्यूबों की जगमगाती रोशनी में फिल्मी धुनों पर फिल्मी नृत्य करता हुआ अनेक मुहल्लों में से होता हुआ तीन घंटे में रात 11:30 बजे प्रोफेसर कॉलोनी पहुँचा और वहाँ उतनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रात में ही आदिकुमार की वैवाहिक क्रियाएँ सम्पन्न की गयीं।

लगभग तीन वर्ष पूर्व भोपाल में पूज्य मुनिद्वय समतासागर जी एवं प्रमाणसागर जी का चातुर्मास हुआ था। उसमें मुनिद्वय ने अपने प्रभावशाली मार्मिक उपदेशों से श्रावकों को रात्रिकालीन विवाह एवं भोज आदि की कुप्रथाओं को समाप्त करने की प्रेरणा दी थी। भोपाल के समस्त श्रावकों ने उनके उपदेश से प्रभावित होकर रात्रि में विवाह और भोज न करने तथा किसी भी रात्रिकालीन विवाह और भोज में शामिल न होने की प्रतिज्ञा की थी। तब से सागर, जबलपुर आदि नगरों के समान भोपाल में भी दिन को ही बारात, विवाह एवं भोज की क्रियाएँ सम्पन्न होती हैं। अत: आदिकुमार की बारात-यात्रा और विवाहविधि का नाटक रात्रि में किये जाने से अनेक श्रावकों को क्षोभ हुआ है। उनका कथन है कि आदिकुमार की बारात रात्रि में निकालकर और विवाहविधि रात्रि में सम्पन्न करके जैनेतर लोगों में यह सन्देश पहुँचाया गया है कि जैनतीर्थंकरों के विवाह रात्रि में हुए थे। तथा जैनों की नई पीढ़ी के सामने भी अनुचित दृष्टान्त रखा गया है। अनेक श्रावकों ने मुझसे फोन पर अपना क्षोभ प्रकट किया है। कई श्रावकों ने व्यक्तिगत वार्तालाप में तथा कुछ ने सम्पादक के नाम पत्र लिखकर अपने मन की पीड़ा व्यक्त की है। तीन पत्र मैं 'जिनभाषित' में 'आपके पत्र' स्तम्भ में प्रकाशित कर रहा हूँ।

पोस्टर में तो वरयात्रा का समय प्रात: 6:30 ही छपा था, फिर वह रात्रि को क्यों निकाली गई, इसकी जानकारी पाने के लिए जब मैंने कार्यक्रम के आयोजकों से बात की, तो उन्होंने बतलाया कि "प्रात:काल के लिए लड़के और स्त्रियाँ तैयार नहीं थीं, क्योंकि लड़कों की परीक्षाएँ चल रही थीं और स्त्रियाँ उस समय स्नान-पूजन और भोजनादि कार्यों में संलग्न रहती। इसलिए महाराज जी ने शाम की अनुमति दे दी।" मैंने पूछा कि लड़कों और स्त्रियों के कहने से मुनिश्री के द्वारा एक धर्मविरुद्ध कार्य की अनुमति कैसे दी जा सकती है ? तब उन्होंने उत्तर दिया कि "महाराज जी का कहना था कि यह तो नाटक है, यथार्थ नहीं। इसलिए रात्रि में बारात निकालने में कोई हर्ज नहीं है।"

किन्तु बारात निकालने का नाटक रात में सड़कों पर करने से दर्शकों को यह समझने का कोई संकेत नहीं मिलता कि जिसकी बारात रात में निकालने का यह नाटक किया जा रहा है, उसकी बारात वास्तव में दिन में निकली थी। इस कारण बारात को रात में निकलते हुए देखकर उनका यह समझ लेना स्वाभाविक है कि बारात वास्तव में रात को ही निकली होगी। और उन्हें दीर्घकाल से बारातों का रात में निकलते हुए देखने का अभ्यास भी है। अत: सड़क-नाटक में दिन में घटित घटना का दिन में ही घटित होने का अनुभव कराने के लिए उसका दिन में ही नाटक किया जाना चाहिए। यदि सड़क-नाटक तीन घंटे का नहीं है, अपितु तीन दिन या अधिक दिन का है, तो उसमें दिन की घटना दिन में और रात की घटना रात में दिखलाने की बहुत सुविधा होती है। ऐसा करने से दर्शकों को यह अपने-आप समझ में आ जायेगा कि कौनसी घटना वास्तव में किस समय घटी थी।

वस्तुत: ऐतिहासिक नाटक में पात्र जरूर नकली होते हैं, किन्तु घटनाएँ और घटनाओं के देश और काल तो वास्तविक ही प्रदर्शित किये जाते हैं। अत: रंगमंच पर ऐसे दृश्य उपस्थित किये जाते हैं, जिनसे घटनाएँ जिस देश और काल में घटित हुई थीं, उसी देश और काल में घटित प्रतीत हों। किसी घटना का रात्रि में घटित होना दिखलाना हो, तो मंच पर किंचित् अँधेरा कर दिया जाता है। इसीप्रकार रात्रि में खेले जाने वाले नाटक में किसी घटना का दिन में घटित होना दर्शाना हो, तो नेपथ्य में सूत्रधार के द्वारा यह आकाशवाणी करायी जाती है कि "इस समय पूर्वाह्न, मध्याह्न या अपराह्न है और अमुक-अमुक पात्र इस समय अमुक-अमुक कार्य करने जा रहा है।" किन्तु यह नाट्यशास्त्रीय प्रयोग रंगमंचीय नाटक में ही किया जा सकता है, सड़कीय नाटक में नहीं। यदि कहा जाय कि रात्रिकालीन सड़क-नाटक में ऐसी घोषणा 'माईक' से की जा सकती है, तो सड़क-नाटक में ऐसा करना अस्वाभाविक हास्यास्पद एवं अनाट्यशास्त्रीय होगा, क्योंकि सड़क-नाटक में किसी घटना का दिन में घटित होने का बोध उसे दिन में प्रदर्शित करके स्वाभाविक रूप से कराया जा सकता है और रात्रि में प्रदर्शित करने से जो असंख्य जीवों की हिंसा हो सकती है, उसका परिहार किया जा सकता है। किन्तु उक्त सड़क-नाटक में माईक से वैसी घोषणा भी नहीं की गयी।

इस प्रकार आदिकुमार की जो बारात यथार्थत: दिन में निकली थी, उसे सड़क-नाटक में रात में निकालने की अनुमति देना नाट्य-निर्देशन सम्बन्धी भयंकर भूल है। इससे जैन-जैनेतरों में यह गलत सन्देश गया है कि जैनतीर्थंकरों के विवाह रात्रि में हुए थे अत: श्रावकों के विवाह यदि रात्रि में होते हैं, तो धर्मसम्मत ही हैं। इसके अतिरिक्त श्री आदिकुमार की बारात का नाटक करनेवाले एक विशाल जुलूस का रात्रि में सड़कों पर नाचते-गाते हुए तीन किलोमीटर की यात्रा करने से विद्युत ट्यूबों की ओर खिंचकर आये हुए कितने जीवों की हिंसा हुई होगी, कितने जीव पैरों के तले कुचले गये होंगे, यह कल्पना कर हृदय काँप जाता है। तथा आदिकुमार के बारातियों का रास्ते में पेप्सी, कोकाकोला, जैसे बाजारू शीतल पेय पीने से आदिकुमार को कितना लज्जित होना पड़ा होगा, यह सोचकर आत्मा रोने लगती है। समाज के अग्रणियों से प्रार्थना है कि वे शान्तमन से विचार करें कि क्या ऐसे कार्य वास्तव में धर्म की प्रभावना करते हैं या इससे उलटा करते हैं ?

रतनचन्द्र जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र रामटेक का इतिहास

रामटेक क्षेत्र को प्रसिद्धि कैसे हुई

अब से लगभग ४०० वर्ष पूर्व नागपुर जिले में भोसले वंश का राज्य था। राजा विष्णुमत का पालने वाला था एक दिन राजा मन्त्रियों एवं सैनिकों के साथ राममंदिर के दर्शनार्थ गया। दर्शन के पश्चात राजा भोजन करने हेतु बैठे। राजा व्यवहार कुशल थे। उन्होंने मंत्रीजी से कहा कि आप भी भोजन कर लें। मंत्री मौन रहा किन्तु राजाज्ञा टलने के भयसे मनमें भयभीत रहा। इसी बीच राजा ने पुन: मंत्री से वही बात कही। मंत्री ने मनमें विचार किया कि राजा से धर्मगुरु बड़े हैं अत: धर्मगुरु का दिया हुआ व्रत दृढ़ता से पालन करना चाहिए। मंत्री ने राजा से निवेदन किया। 'मेरे पितातुल्य राजन्। मुझे यह प्रतिज्ञा है कि वीतराग प्रभु के दर्शन के बिना मैं आहार तो क्या जल भी ग्रहण नहीं करता। जैन की यह पहचान है कि वह अष्टमूलगूणों का पालन करे। प्रथम मांस, द्वितीय मधु, तृतीय मदिरा, चतुर्थ रात्रि भोजन त्याग, पंचम संकल्पी हिंसादी पांचपापों का त्याग, षष्ट पानी छानकर पीवे, सप्तम वीतराग भगवान के दर्शन करे, अष्टम पंचउदुम्बर फलों का त्याग, इन सब दोषों का त्याग तथा वीतराग प्रभु का दर्शन यही जैन के लक्षण हैं। मंत्री की बात सुनकर राजा प्रसन्न हुआ तथा मंत्री से कहा कि आप शीघ्र ही हाथी पर बैठकर कामठी में सुन्दर विशाल जैन मंदिर है सो जावें तथा वहाँ भव्य शांत मुद्रासन प्रतिमाओं का दर्शनकर प्रतिज्ञा पूर्ण करें।'

यह सुनकर मंत्री ने कहा कि २० वे तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रतनाथ के समय में भगवान राम, सीता एवं लक्ष्मणजी इस क्षेत्र में आये एवं ठहरे थे अत: यहाँ कहीं न कहीं जिनमंदिर अवश्य ही होना चाहिए। तुरन्त ही राजाज्ञा से सैनिकों ने जंगल छान मारा वहीं एक ग्वाले से ज्ञात हुआ कि इसी जंगल में एक वृक्ष के नीचे एक मूर्ति विराजमान है। वहाँ जाने पर ज्ञात हुआ की विशाल मुद्रा शान्तिनाथ भगवान की १५ फुट ऊँची प्रतिमा विराजमान थी। भगवान के दर्शन कर मंत्री ने भोजन ग्रहण किया। बाद में राजाज्ञा से शान्तिनाथ मंदिर एवं निकटस्थ पहाड़ी पर राममंदिर का निर्माण कार्य आरम्भ हुआ।

अतिशय क्षेत्र में हुए चमत्कारों की कथा -

एक बार मंत्री जैन मंदिर निर्माण करा रहा था उस समय किसी अन्य मंत्री ने ईर्ष्यावश राजा से शिकायत कर दी कि यह मंत्री जैन होने के कारण राज खजाने से जैन मंदिर बनवा रहा है तथा दूसरा अन्य मंदिर ठीक से नहीं बन रहा है। राजा ने बिना विचारे ही जैन मंदिर का कार्य रुकवाने का आदेश दे दिया। आज्ञा होते ही आत्म कल्याण का साधन जिनमंदिर का कार्य रुकवा दिया गया। दूसरे ही दिन से रानी भयंकर बीमार हो गई तथा अनेकों उपचारों से भी अच्छी नहीं हुई। इस अवसर पर दयालु सेवाभावी मंत्री ने निवेदन किया राजन् आपने धर्मकार्य मंदिर निर्माण रुकवा दिया इसका प्रत्यक्ष फल आपको मिला है। आप मंदिर निर्माण कार्य पुन: आरम्भ करा दीजिए। उसके पुण्य से रानी का असाता कर्म नष्ट होकर रानी अच्छी हो जावेंगी। मंदिर निर्माण आरंभ की आज्ञा होते ही रानी का स्वास्थ्य सुधर गया।

एक बार भगवान की एक छोटी प्रतिमा वेदी से गुम हो गई। पुजारी के द्वारा भगवान से प्रार्थना करने पर यह दो दिन बाद अपने आप दूसरी वेदी में प्राप्त हुई।

एक बार मध्यान्ह काल में शेर आया तथा भगवान के दर्शन किए। पश्चात् गायब हो गया। ऐसा कहते हैं कि वह शेर नहीं यक्षपाल देव था। यह दृष्य मुनिश्री ऋषभसागरजी ने स्वयं देखा।

इसी तरह अनेकों चमत्कार हुए हैं तथा गुप्त फल मिलते रहते हैं।

इसी तरह एक चमत्कार कथा यह भी सुनी जाती है कि राजमंत्री को भगवान के दर्शन न मिलने से चार उपवास हो गए तथा मंत्री दृढ़ता के साथ प्रतिज्ञा निभाता रहा। एक दिन सोते समय मंत्री ने स्वप्न में देखा कि ऐसी वाणी सुनाई पड़ रही है 'हे मंत्री, तुम भूखे क्यों रह रहे हो, इसी जंगल में भगवान शान्तिनाथ की प्रतिमा है, उसे खोजलो।' मंत्री ने जागने के उपरान्त स्वप्न वाणी के अनुरुप वन में खोज कराई तो प्रतिमा मिली। मंत्री ने जिनदर्शन कर चार उपवास का पारणा किया। प्रतिज्ञा में दृढ़ रहने का यह प्रत्यक्ष फल देखिये।

इसी भाँति अनेकों चमत्कार होते रहते हैं आप भी भक्ति करके अपनी बाधाएँ दूर कर सकते हैं।

यहाँ यह शंका उपस्थित हो सकती है कि चमत्कार तो राग का कार्य है एवं भगवान वीतरागी हैं अत: भगवान चमत्कार कैसे कर सकते हैं। इसका समाधान यह है कि भगवान तो वीतरागी हैं। वे पर द्रव्य का अच्छा बुरा न करते न कर सकते लेकिन उनकी शांत मुद्रा युक्त प्रतिमा हमारे परिणामों को निर्मल करने का वाहय साधन है हमारा भला बुरा हमारे पुण्य पाप कर्मों के अधीन है। कभी-कभी भगवान भी भक्त की मनोकामना पूर्ण करने एवं धर्म प्रभावना करने हेतु धर्मानुरागी शासन देवी देवता भी चमत्कार दिखाते हैं। अत: यह सिद्ध हुआ कि भगवान स्वयं कुछ नहीं करते।

क्षेत्र स्थिति दर्शन

इस क्षेत्र पर प्रथम तो एक विशाल सुन्दर दरवाजा है मानो इसमें सुख शांति के मंदिर का प्रवेश द्वार ही हो। विशाल मंदिरों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को परकोटे से घेरा हुआ है। जिस तरह व्रत, त्याग, तपस्या रूपी परकोटा आत्मा की दुखों से, कर्मों से रक्षा करता है उसी प्रकार इन सुन्दर मंदिरों की वह परकोटा रक्षा करता है। परकोटे के बाहर सुन्दर पहाडियाँ एवं वन है। वन की शुद्ध वायु एवं जड़ी बूटी आदि औषधियों से जिस तरह रोगशांति होती है उसी तरह भगवान शांतिनाथ के दर्शन करने से आत्मा के राग रूपी रोग शान्त होते हैं। क्षेत्र से निकट ही एक किलो मीटर दूरी पर रामटेक नगर स्थित है।

क्षेत्र व्यवस्था :

यहाँ यात्रियों के लिए सुन्दर व्यवस्था है। यहाँ यात्रियों के ठहरने के लिये कमरों वाली धर्मशाला है। यहाँ के कार्यकर्ता एवं मुनीम आदि धर्मानुकूल अच्छी व्यवस्था कर देते हैं।

रामटेक क्षेत्र जाने पर करने योग्य कार्य

जिस तरह धन कमाने हेतु विदेश जाया जाता है उसी भाँति सच्चे अविनाशी सुख हेतु, सम्यग्दर्शन हेतु, शांति हेतु, पुण्य हेतु इस लोक एवं परलोक सुख हेतु वहाँ जाकर भगवान की पूजा, भक्ति करना चाहिए। यदि अपनी शक्ति हो तो खूब दान देना चाहिए ताकि क्षेत्र की विकास योजनाएँ पूर्ण हो सकें। धर्म स्थान जितने सुन्दर होंगे, भक्तों का मन उतना ही आकर्षित होगा, प्रसन्न होगा, विशेष पुण्य बंध होगा सम्यग्दर्शन होगा। आगे चलकर आत्मा भगवान बनेगा एवं अविनाशी सुख को प्राप्त करेगा। अत: वहाँ खूब दान दीजिए तथा वहाँ की योजनाओं को पूर्ण कीजिए।

शान्तिनाथ भगवान कैसे बने

ऐरावत् क्षेत्र में तिलक नामक नगर था। वहाँ का राजा मेघरथ था जो कि न्यायवान एवं धर्मात्मा था कहा जाता है-

बीज राख फल भोगवे, ज्यों किसान जगमांहि।
त्यों चक्री नृप राज करे, धर्म विसारे नांहि॥

इसी कथन के अनुरुप वह राजा संसार भीरु था, पाप से डरता था एवं दान पूजादि धर्मकार्य किया करता था। एक दिन वह तीर्थंकर की वाणी सुनकर संसार, शरीर, भोगों से विरक्त हो गया तथा अपने पुत्र को राज्य देकर दीक्षा ग्रहण कर ली। समस्त इच्छाओं का त्याग किया। इच्छानिरोधस्तप: इस सूत्र के अनुरुप घोर तपस्या करने लगा। ध्यान, तपादि के द्वारा परम शत्रु मिथ्यात्व, दर्शन मोह का नाश किया, चारित्र मोह की शक्ति मन्द की तथा सोलह कारण भावनाओं का चिन्तवन करने लगा फलत: तीन लोक का उत्कृष्ट पुण्य तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया। मनुष्य भव का सार रुप समाधिमरण करके शिवपुर (मोक्ष) के मार्ग में रेस्टहाउस स्वरूप स्वर्ग को प्राप्त हुए। वहाँ के इन्द्रिय सुख उदासीनता से भोगकर आयु पूर्ण होने पर वहाँ से च्युत होकर हस्तिनापुर में राजा अजितसेन की प्रियदर्शना रानी के गर्भ में आए तथा एक साथ ही तीर्थंकर, कामदेव एवं चक्रवर्ती पदवी के धारक पुत्र हुए। उनकी सेवा, पूजा, भक्ति इन्द्र, देव देवियाँ सभी करते थे। आनंद से जीवन व्यतीत करते हुए धीरे-धीरे वृद्धि को प्राप्त हुए। एवं राजगद्दी के स्वामी बने। वे न्याय नीति से राज्य करते थे।

वे एक दिन शयनागार में दर्पण में अपना मुख देख रहे थे कि उन्हें दर्पण में अपने दो प्रतिबिम्ब दिखाई दिए। इतना ही निमित्त उनके वैराग्य का कारण बन गया तथा वे संसार, शरीर भोगों से विरक्त हो गए। तीनों पदों के वैभव को त्यागकर दीक्षा ग्रहण की एवं घोर तपस्या करके अपने कर्मों का नाश कर भगवान बने।

भगवान शान्तिनाथ द्वारा त्यक्त वैभव

चौदह रत्न, नव निधियाँ, बत्तीस हजार देश, बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा, छब्बीस हजार पुर, चौरासी लाख हाथी, चौरासी लाख रथ, अठारह करोड़ घोड़े, चौरासी करोड़ पदधारी, छियानवें हजार रानियाँ, छह खण्ड का राज्य, चौरासी खण्ड का महल, चक्र, अनेक चेतन, अचेतन मिश्र सम्पत्तियों का जीर्ण तृण वत् त्याग किया।

अरे भव्यो। विचार करो। शान्तिनाथ जी के पास इतनी सम्पदा थी, वह उन्होंने छोड़ दी। आपके पास उस तुलना में कुछ भी नहीं। फिर भी आप इसमें चिपके पड़े हैं। आपके पास आशा रुपी सम्पत्ति भरपूर है। इसलिए आप त्याग नहीं पाते। अरे भैय्या। कहा भी है-

धन भोगन की खान है, तन रोगन की खान।
ज्ञान सुख की खान है, दुख खानी अज्ञान॥

आप धन के लिए कितना अनर्थ करते हैं। परिवार, भाई बहिन, माता-पिता, गुरु सम्बंधी किसी को नहीं देखते और मरने मारने के लिए तैयार हो जाते हैं। जबकि धन का एक कण भी तुम्हारे साथ जानेवाला नहीं है। आजकल धन के पीछे मानव भिखारी हो गया है। लज्जा, शर्म सब छोड़कर मनमानी दहेज की भीख मांगता है। भैय्या, भीख मांगनेवाला कौन होता है, भिखारी। सोचें आप कौन हैं? इस देहज प्रथा से तो हमारी अनेकों बहन, बेटियों ने धर्म, समाज, प्राणों को छोड़ दिया इस पाप के भागी वही हैं जो दहेज के भूखे हैं। इस पाप से नरकों में बुरी तरह हवा खानी पडेगी। अत: हे भव्यो! सावधान हो जाओ।

उद्‌बोधन

हे भव्य जीवो! यह भारत भूमि सदियों से पवित्र, उत्तम तीर्थ है। इसमें २४ तीर्थंकर, राम आदि बलदेव, भरत आदि चक्रवर्ती, हनुमान आदि कामदेव, सीता आदि सतियाँ, कृष्ण आदि नारायण ऐसे अनेकों महापुरुष पैदा हुए। महान ऋषि, तपस्वी आत्माएँ पैदा हुईं। इस भारत में अनेकों सिद्ध क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र इसीलिए यह देश महान है। आज भी इस देश में अनेक महर्षि मुनि विराजमान हैं। इनसे भारत शोभनीय है। जब तक ये विभूतियाँ भारत में रहेंगी तब तक मोक्षमार्ग चालू रहेगा। हे भव्यो ! इस पंचम काल में तो धर्म एवं धर्मानुयायी हैं, उनके निमित्त से अपना कल्याण कर लो। भव से भवान्तर जाने के लिए मार्ग का पथ्य रुप, मोक्ष की साधनभूत मनुष्य पर्याय पाने हेतु पुण्य उपार्जन कर लो। अगर यहाँ चूक गए तो छटवाँ काल भयंकर आने वाला है। जिसमें पाप ही पाप रहेगा। दुख ही दुख रहेगा। न खाने को अन्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होगा न पीने को जल। न पहनने को कपड़ा होगा न रहने को मकान। धर्म कर्म कुछ भी नहीं होगा। देव शास्त्र गुरु का भी साधन नहीं मिलेगा। नरक से प्राणी आएगा, नरक जाएगा। इसलिए हे भव्यो ! पांचवे काल से बचने के लिए दान, पूजा, भक्ति, त्याग, तप आदि यथाशक्ति करते रहो। यही हमारा आशीर्वाद है।

आचार्य श्री के ऐतिहासिक दो चातुर्मास

अनेक अतिशय समेटे भगवान शांतिनाथ की मनोहारी मूर्ति और पर्वतीय प्रदेशों से युक्त रामटेक अतिशय क्षेत्र और अधिक महान अतिशय क्षेत्र के रुप में तब धन्य हो उठा जब १९९३ और दूसरी बार पुन: १९९४ में प.पू. संत शिरोमणि दिगम्बराचार्य श्री १०८ विद्यासागरजी महाराज के पावन वर्षायोग (चातुर्मास) हुए। रामटेक ही क्यों पूरा महाराष्ट्र धन्य हो गया। कण-कण में आज भी मंगल प्रवचनों की दिव्य ध्वनि गुंजायमान हो रही है। आचार्यश्री एवं मुनिसंघ के आशीर्वाद तथा सान्निध्य में भगवान शांतिनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार, लेपन कार्य की पूर्णता, महामस्तकाभिषेक एवं रामटेक क्षेत्र का चतुर्मुखी विकास हुआ। हजारों यात्रियों के ठहरने की सुविधा अब इस क्षेत्र में उपलब्ध है। एक वृहत् प्रवचन हाल परिसर में स्थायी रुप लिए है जिसमें हजारों भक्त प्रवचन श्रवण कर सकते हैं।

आचार्य श्री का मंगल आशीर्वाद एवं भूमिपूजन

चातुर्मास काल में एक परम ऐतिहासिक मांगलिक धर्म ध्वजाविस्तारक प्रस्ताव आचार्यश्री के समक्ष अनेकानेक दिगम्बर जैन धर्मप्रेमी बन्धुओं ने निवेदन किया कि इस रामटेक अतिशय क्षेत्र को चिरस्थायी गरिमा एवं धर्म प्रभावक मांगलिक तीर्थ संज्ञा प्रदान करने हेतु वर्तमान चौबीसी एवं पंचबालयति जिनालय का निर्माण आपके आशीर्वाद से हो जो विलक्षण एवं अनोखा हो। अनेक आर्किटेक्ट, इंजीनियर, वास्तुकला पारखी कलाकारों से परामर्श के पश्चात् आचार्यश्री ने अद्वितीय धातुनिर्मित खडगासन चौबीसी एवं पंचबालयति के भव्य पाषाण जिन मंदिर के नवनिर्माण हेतु शुभाशीर्वाद प्रदान किया और शीघ्र ही जिनालय का भूमिपूजन विधान कार्य श्रीमान सेठ मौजीलाल हरप्रसादजी जैन नागपुरवालों के शुभहस्ते सम्पन्न हुआ। यह भी निर्धारित हुआ कि इस धार्मिक कलात्मक वास्तुकृति में ईंट-लोहा और सीमेन्ट का उपयोग नहीं होगा। पाषाण और चूना ही इसमें प्रयुक्त होगा।

जैन सिद्धान्त, जैन दर्शन, जैन पुरातत्व, जैन कलाकृति, जैन संस्कृति तथा जैन वास्तुभूमि का आकलन ऐसे अनुपम धर्म प्रभावक जिनबिम्बों से ही होता है। युग-युग तक इतिहास इन कलाकृतियों के माध्यम से जैनाचार्यों, जैन धर्म, जैन सन्तों तथा जैन प्राचीनतम इतिहास को विज्ञापित करता है। नि:सन्देह ऐसी अद्वितीय वास्तुकृति कालान्तर में कृत्रिम जिनमंदिर (चैत्यभूमि) की उपमा से विभूषित होती है। यह अद्वितीय पाषाण कृति जिनालय रामटेक जैसे अतिशय क्षेत्र महान, महानतर, महानतम अतिशय से युक्त सम्यकदर्शन का कारण बने। १००८ भगवान शांतिनाथ के सान्निध्य में निर्मित विश्व की अद्वितीय, अद्भुत, अनुपम यह चौबीसी एवं पंचबालयति जिन मंदिर चैत्य वास्तुकला की दृष्टि से श्रेष्ठ कलाकृति सिद्ध हो, ऐसा अथक प्रयास किया जा रहा है। इस मनोहारी विश्व की अद्वितीय पुण्यवर्धक पाषाण कलाकृति को भारत चिरकाल तक, शताब्दियों तक स्मरण रखे- इसमें आप सबका मुक्तहस्त से सहयोग अति आवश्यक है। जैन शास्त्रों में भी वर्णन है कि प्रत्येक श्रावक को अपनी आय का दसवाँ भाग दान में अवश्य ही देना चाहिए ताकि कर्मों की निर्जरा होती रहे।

'जिनभाषित' के सम्बन्ध में तथ्यविषयक घोषणा

प्रकाशन स्थान	:	1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.)
प्रकाशन अवधि	:	मासिक
मुद्रक-प्रकाशक	:	रतनलाल बैनाड़ा
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	.	1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.)
सम्पादक	:	प्रो. रतनचन्द्र जैन
पता	:	ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा, भोपाल- 462 039 (म.प्र.)
स्वामित्व	:	सर्वोदय जैन विद्यापीठ, 1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा- 282002 (उ.प्र.)

मैं, रतनलाल बैनाड़ा एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार उपर्युक्त विवरण सत्य है।

रतनलाल बैनाड़ा, प्रकाशक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाकवि आचार्य विद्यासागर कृत महाकाव्य मूक माटी में प्रकृति -चित्रण

श्री सुरेश सरल

प्रकृति का अवलोकन करने के उपरान्त उसका चित्रण करना एक बात है और कल्पना क्षेत्र में रचे गये प्राकृतिक-दृश्य का वर्णन करना पृथक बात है। आचार्य विद्यासागर जी ने मूकमाटी महाकाव्य के अनेक स्थलों पर प्रकृति के काल्पनिक दृश्य निर्मित किये हैं, कई स्थानों पर दृश्य केवल वे ही देख रहे हैं- ऐसा ज्ञात होता है। वे ही उसके रचियता और वे ही उसके दृष्टा। मगर दृश्यों का चित्रण करते समय वे दृष्टा के रूप में पहले, पाठकों की नजर में आ जाते हैं।

चूँकि सम्पूर्ण महाकाव्य के पार्श्व में जैन सिद्धान्त है और उन्हें कहीं, तनिक भी शिथिल/क्षीण नहीं होने दिया गया है, अतः स्वभाविक है कि प्रकृति चित्रण करते हुए भी रचनाकार ने यह ध्यान रखा हो कि भले ही चित्रण लघु रहे, पर उसकी उपस्थिति से सिद्धान्तों के साथ खिलवाड़ न हो।

उनका महाकाव्य प्रकृति - चित्रण से प्रारंभ किया गया है जहाँ, प्रथम खण्ड की पहली पंक्ति ही पाठक को प्रकृति की ओर ले जाती है- 'सीमातीत शून्य में/नीलिमा बिछाई/और इधर...नीचे/निरी नीरवता छाई।'

'नीचे' से अर्थ है धरती पर। वहां, ऊपर, गगन में चारों और नीलिमा है और इधर धरती पर शांति। विचित्र चित्रण है- रंग का प्रति - उत्तर रंग से होना चाहिए था, यथा ऊपर नीलिमा है तो नीचे कोई दूसरा रंग कालिमा, हरीतिमा आदि, पर वे कथन ऐसा नहीं संवारते, वे नीलिमा के समक्ष 'शांति' की बात कहते हैं जो 'प्रकृति चित्रण में वैचित्र्य' का दुर्लभ उदाहरण है(पृष्ठ एक)

वे बाद की पंक्तियों में, पूरे दृश्य को माता का मार्दव उत्संग (गोद) में बदल देते हैं, जब लिखते हैं- भानु की निद्रा टूट तो गई है/ परन्तु अभी वह/लेटा है/माँ की मार्दव गोद में/मुख पर अंचल लेकर/करवटें ले रहा है। (पृष्ठ एक) यह विशाल दृश्य देखने वाला कवि अपने लेखन में अनेक विशालताओं को लेकर काव्य यात्रा पर पाया गया है।

रचनाकार ने पूर्व-दिशा में सुबह-सुबह जो लालिमा देखी है, उसका वर्णन भर नहीं करते, बल्कि कुछ समय के लिये वे पूर्व-दिशा को ही एक सुंदरी की तरह पाठकों के परिचय में लाते हैं- 'प्राची के अधरों पर /मन्द मधुरिम-मुस्कान है/सर पर पल्ला नहीं है/और/सिंदूरी धूल उड़ती सी/रंगीन राग की आभा/भायी (ई) है, भाई।' मगर वे पाठक को उस सुन्दरी के दर्शन नहीं होने देते और स्वतः एक वर्णी की तरह दृश्य के आनन्द को भाषा के माध्यम से सामने लाते हैं- लज्जा के घूंघट में/डूबती सी कुमुदनी/प्रभाकर के कर-छुवन से/बचना चाहती है वह /अपनी पराग को/सराग मुद्रा को/पांखुरियों की ओट देती है। (पृष्ठ दो)

'यहाँ लज्जा का घूंघट' पंक्ति पाठक को गुदगुदी पैदा करती है, फिर 'डूबती सी कुमुदनी' पाठक के समीप ही वह (नायिका) है, का आभाष कराती है। 'प्रभाकर के कर छुवन से' सूर्य की किरणों के द्वारा स्पर्श किया जाना दूर की बात लगती है, पाठक ही हाथ से स्पर्श कर रहा लगता है। अंतिम पंक्ति 'पंखुरियों की ओट देती है' जैसे किसी सुंदर सलोनी युवती ने दोनों हथेलियों से अपना मुख चंद्र छुपाने का सुकोमल प्रयास किया हो।

यों सम्पूर्ण काव्य (जो ४८८ पृष्ठों में है) में आचार्य श्री ने स्थल व्यवस्था और परिवेश - प्रस्थान को ध्यान में रख कर, मात्र अठारह जगहों पर प्रकृति चित्रण आवश्यक समझा है, जिसमें उनका कवि श्रैंगारिक दृष्टि धारण कर कुछ देखता चलता है।

इसे और स्पष्ट करूं कि कई दृश्य महाकवि खुद तो देखते हैं, किन्तु पाठकों को नहीं देखने देते, बल्कि उन (दृश्यों) के आनन्द का खुलासा पाठकों से शब्दों के माध्यम से कर, आगे बढ़ जाते हैं। जैसा कि उनने ऊपर कहा है- 'पांखुरियों की ओट'।

महाकाव्य के प्रारंभिक - अंश में ही ये पंक्तियाँ 'न निशाकर है, न निशा/न दिवाकर है, न दिवा' दिन और रात के मध्य आने वाले एक ऐसे संधिकाल की भनक देती हैं जिसे केवल रचनाकार ने देखा-जाना है, और उसी के कथानानुसार पाठक एक चित्र आंखों में बनाने का सुंदर प्रयास कर लेने में सफल हो जाता है। (पृ. ३)

कवि कल्पनाशीलता का प्रथम संस्थापक पुरुष होता है, वह ही हैं हमारे आचार्यश्री। वे धरती माता के चेहरे का वर्णन कर नये कीर्तिमान स्थापित कर देते हैं, जब कहते हैं - 'जिसके/सल-छलों से शून्य/विशालभाल पर/गुरु गम्भीरता का/उत्कर्षण हो रहा है/ जिसके/ दोनों गालों पर/गुलाब की आभा ले/हर्ष के संवर्धन से/दृग-बिन्दुओं का अविरल/वर्षण हो रहा है।' (पृष्ठ ६)

यह प्यारा दृश्य भी पाठक सीधा-सीधा नहीं देखता, उसे कलमकार अपने शब्दों के माध्यम से दिखलाता है। कहें, बात नायिका-रूप की हो या माता रूप की, कवि के कुछ स्थलों पर अपने संतुलित शब्दों को माध्यम बना कर-दृश्य का आभास कराया है, दृश्य की सर्जना किये बगैर, मात्र अपने वर्णन-वैभव के सहारे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे, आगे, प्रभात का परिचय कराने में भी भाषा और व्याकरण से परे, मात्र कल्पना के बल पर भारी सफलता पाते हैं, जब लिखते हैं- 'प्रभात आज का/काली रात्रि की पीठ पर/हलकी लाल स्याही से/कुछ लिखता सा है कि/यह अंतिम रात है। (पृ. १९)'

'यहाँ प्रभात के द्वारा रात्रि की पीठ पर कुछ लिखना' पाठक के आनंद को कई गुणा बढ़ा देता है। हर योग्य और चरित्रवान नागरिक इन पंक्तियों को पढ़ते हुए क्षण भर को अपने परिवार में उड़ कर आ जाता है, जहाँ उसकी प्रिय पत्नी है। वहाँ वह नागरिक दो स्थितियों पर सोचता है- वह भी अपनी पत्नी की पीठ पर इसी तरह कुछ लिखता रहा है विगत् वर्षों में या अभी तक उसने पीठ पर क्यों नहीं लिखा? चित्रण की यह जीवंत प्रभावना ही है जो पाठक को सोचने के लिए विवश करती है।

प्रकृति का ऐसा दुर्लभ चित्रण जो सौ प्रतिशत मौलिकताओं से सजा होता है, किसी काव्य (प्रबंध काव्य और महाकाव्य) में अन्यत्र देखने नहीं मिला।

किसी बड़ी मील से निर्मित साड़ियाँ तो कहीं न कहीं देखने मिल जाती हैं, परन्तु इधर 'प्रभात' ने 'रात्रि' को, भेंट में जो साड़ी दी है, वह मात्र आचार्यश्री की मिलों में ही बनती है। वे दिगम्बर साधु, सवस्त्र कवियों की कल्पना से सैकड़ों मील आगे चलते मिलते हैं, जब वे कहते हैं- 'उपहार के रूप में/ कोमल कोपलों की/हलकी आभा घुली/हरिताभ की साड़ी/देता है रात को।' सूती और रेशमी साड़ी से लेकर बनारसी साड़ी तक, साड़ियों की शताधिक प्रजातियाँ और प्रकार देखे हैं, पर मूकमाटी के महाकवि ने हरिताभ की साड़ी प्रकाश में लाकर अब तक के कल्पनाश्रित कवियों के समक्ष नव-आदर्श तो रखा ही है, नूतन सर्जना को नया फ्रेम (चौखट) भी प्रदान किया है। (पृष्ठ -१९)

सत्य तो यह है कि ऐसे प्रसंगों के चित्र कोई तूलिकाकार अपनी तूलिका से केनवास पर उतार ही नहीं सकता, ये तो काव्यलोक में घुमड़ने वाले ऐसे दृश्य हैं जिन्हें पाठक कवि की कृपा से अपनी अनुभूति में ला सकता है, पर ड्राईंग-रूम में सर्व साधारण के अवलोकनार्थ टांग नहीं सकता।

इतना ही नहीं मूकमाटी का कवि ओस के कणों में उल्लास-उमंग/हास दमंग और होश के दर्शन भी करता है। (पृष्ठ २१)

भला ऐसी कल्पनाओं के चित्र मृत तूलिका कैसे बना सकेगी, उसके लिये तो जीवंत विचार ही सहायक हो सकते हैं कवि के।

बोरी में भरी हुई माटी कैसी या किस आकार में दिख सकती है, कौन बताये? परन्तु हमारे कवि ने वहाँ भी अपनी मधुर-कल्पना को नवाकार देकर सफलता पाई है। वे कहते हैं- 'सावरणा, साभरणा/सज्जा का अनुभव करती/नवविवाहता तनूदरा।' बोरी के खूंट, छोर तक माटी भर जाने के बाद वे कैसे दिखते हैं कवि को? उपमा का चमत्कार यहाँ देखने मिलता है, वह है- 'तनूदरा'। अश्लीलता या वासना के स्वर से दूर एक सुंदर उपमा। (पृष्ठ ३०)

जिस तरह लेखक अपनी रचना से वार्ता कर लेता है उसी तरह उनका पात्र शिल्पी माटी से बात-चीत करता है, मगर कवि ने बातचीत को इतनी जीवंतता प्रदान कर दी है कि माटी एक महानायिका की तरह पाठकों के मस्तिष्क में प्रवेश करती है, जब शिल्पी मिट्टी से पूछता है- सात्विक गालों पर तेरे/घाव से लगते हैं/ छेद से लगते हैं/सन्देह सा हो रहा है/ भेद जानना चाहता हूँ/यदि कोई बाधा न हो तो/बताओगी चारूशीले? (पृष्ठ ३१)

यहाँ कविता में नहीं, चित्रण का चमत्कार शिल्पी के प्रेमभर सम्बोधन में है, जब वह पूछता है- बताओगी - 'चारूशीले।' यह 'चारूशीले' शब्द पाठक के मस्तिष्क के तार झनझना देने तक भीतर कौंधता रहता है और शब्द की गरिमा और सौन्दर्य के बोध को किसी सुन्दर रूप में तलाशने लग जाता है। अपने ही परिचय में आये किसी रूप में।

सूर्य का उदय - एक प्राकृतिक घटना है, नित्य-नित्य है। सूर्य के कारण धूप का प्रसारण भी प्राकृतिक है। सूर्य और धूप के मध्य कोई प्राकृतिक रिश्ता भी है क्या? हम तो नहीं जानते थे, पर कलमकार ने उसे स्पष्ट करने का सद-प्रयास किया है- दिनकर ने अपनी अंगना को/दिन भर के लिये/भेजा है उपाश्रम की सेवा में/और वह आश्रम के अंग-अंग को/आँगन को चूमती सी.../सेवानिरत..धूप...। कवि ने धूप को सूर्य की अंगना सम्बोधित कर एक नये किन्तु अत्यंत मौलिक रिश्ते का उद्घोष किया है जो अन्यत्र पढ़ने नहीं मिला। (पृष्ठ ७९) इस स्थल पर अंगना के बाद आँगन शब्द का प्रयोग कर भाषायी चमत्कार को बल दिया गया है।

पाठक को एक मिठास और मिली है उक्त पंक्तियों से, वह यह कि किरणों का सहज ही आश्रम में आना एक मायने रखता है, पर उनका आश्रम में आकर आश्रम का अंग-अंग चूमना- विशेष मायने की संरचना करता है। यही है चित्रण का चमत्कार।

इसी तरह एक अन्य उदाहरण है, मछली का पानी में जन्म लेना प्राकृतिक है, पर आचार्यश्री अपने चिंतन से- उस प्राकृतिक घटना के भीतर छुपी हुई स्थिति को प्रकट करने में साफल्य पाते हैं, जब वे लिखते हैं- 'जल में जनम लेकर भी/जलती रही मछली।' यह मछली जैसे जीवधारियों का सत्य है जिसे आचार्यश्री ही समझ सुन सके हैं। (पृष्ठ ८५)

जल में जले मछली - यह शब्दोपयोग सामान्य नहीं है, यह प्रतीति और वह अनुभूति दार्शनिकता से जन्मी लगती है। महाकवि मात्र कल्पनाशीलता के विमान पर नहीं चलते वे दार्शनिकता के राजपथ पर भी चले हैं काव्य लिखते समय।

प्रकृति के महत्वपूर्ण चित्रण से लबरेज महाकाव्य का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथम खण्ड समृद्ध बनाया गया है, जबकि द्वितीय खण्ड में वह तनिक भी आवश्यक नहीं माना गया है, फलत: प्रकृति की कोई लघु दृश्यावली दृष्टि में नहीं आती, किन्तु खण्ड तीन में रचनाकर का चिंतन पुन: प्रकृति का पावन स्पर्श करता है, जब वे बादलों से बरसे हुए पानी को धरती पर गिरता हुआ देखते हैं और फिर वही पानी विशाल राशि के साथ धरती का सब कुछ बहाता हुआ अपने साथ समुद्र में ले जाता है, वे उस दृश्य को शब्द देते हैं- 'बसुधा की सारी सुधा/सागर में जा एकत्र होती' इन पंक्तियों में वे धरती पर पानी के साथ बहे हुए अनेक पदार्थों को 'सुधा' का सम्बोधन देकर अपने कवि का स्तर बहुत ऊँचा करने में भी साफल्य पा सके हैं। (पृ. १९)

धरती की सम्पदा को आदर देने के निमित्त ही उन्होंने 'सुधा' शब्द का श्रेष्ठ उपयोग किया है। यहाँ वर्तमान के विख्यात कविगण काफी पीछे रह जाते हैं जिनने लिखा है कि धरती सोना और हीरा-मोती उगलती है।

अब मैं जो उदाहरण देने जा रहा हूँ वह कवि की सुकुमार भावनाओं का सुंदर परिचय तो देता ही है, उसे प्रकृति की घटनाओं का ज्ञाता भी सिद्ध करता है। आकाश में तीन बदलियों को उड़ते देख वे किस कदर प्रकृति में समाहित हो जाते हैं, यह समझने विचारने की बात है- गजगामिनी भ्रम भामिनी/दुबली पतली कटि वाली/गगन की गली में अबला सी/तीन बदली निकल पड़ी हैं। दधि धवला साड़ी पहने/पहली वाली बदली वह/ऊपर से/साधनारत साधवी सी लगती है/ रति पति प्रतिकूला मतिवाली/पति मति अनुकूला गति वाली। इतनी दिव्य है वह उनकी प्रथम बदली। प्रथम के पीछे-पीछे चल (उड़) रही दूसरी बदली, जो मध्य में हैं, का वर्णन पृथक है-

'बिजली बदली ने/पलाश की हँसी (जै) सी साड़ी पहनी/गुलाब की आभा फीकी पड़ती जिससे/लाल पगतली वाली, लाली रची/ पद्ममिनी की शोभा सकुचाती है जिससे।'

बदलियाँ बदलियाँ न हुई, तीन अल्हड़ सहेलियाँ हो गई हैं यहाँ, जिनके श्रृंगार और छवि पृथक होते हुए भी एक साथ चल रही हैं। तीसरी बदली का प्रकृति - चित्रण भी कम नहीं है, जब कवि लिखते हैं- नकली नहीं, असली/सुवर्ण की साड़ी पहन रखी है/ पिछली बदली ने बदलियों का वर्णन कर तरूणियों के रूप लावण्य को उपस्थित करता हुआ कवि अपनी उस दृष्टि का परिचय व प्रभाव यहाँ पूर्ण बारीकी से करा देता है, जो प्रकृति के दृश्य देखने में अतिरिक्त क्षमतायें धारण किये हुए हैं (पृ. १९९-२००)

इसी पृष्ठ पर कवि ने सूर्य और धूप का नूतन रिश्ता तय कर दिया है, वे प्रभा (धूप) को प्रभाकर की प्रेयसि पहले ही मान चुके हैं, अब वे उसे पत्नी मानकर कलम चलाते हैं- 'प्रभाकर की प्रभा को प्रभावित करने का/' ... बाद में कवि प्रभाकर और प्रभा के रिश्ते को नाम देता हुआ लिखता भी है- 'अपनी पत्नी को प्रभावित देख कर/प्रभाकर का प्रवचन प्रारंभ हुआ। प्रकृति चित्रण की ये कल्पनायें सहज नहीं हैं, इन्हें कागज पर उतारने में रचनाकार को कल्पना के हिमालय जितनी ऊँचाई स्पर्श करनी पड़ी होगी। (पृष्ठ २००)'

पूरे ग्रन्थ में एक विचित्र संदर्भ भी देखने मिला है, जब कलमकार का एक पात्र 'बादल' विशाल समुद्र का पक्ष लेते हुए सूरज को डांट पिलाता है। चूंकि कलमकार का आशय ही बादल और सूरज की बातचीत सुनने-सुनाने का है, इसलिये इस दृश्य को मैं 'प्रकृति - चित्रण' में ही समाहित पा रहा हूँ, क्यों कि सूर्य एक प्राकृतिक तत्त्व है, उसका उदय और अस्त प्राकृतिक है, उसका तपना प्राकृतिक है। इसी तरह बादल-दल भी प्राकृतिक है, कवि ने सीधा-सीधा सूर्य को नहीं डांटा, कथा के एक पात्र ने उस पर कोप उतारा है, जब बादल नक्षत्रों के मध्य अपने पांडित्य का डंका बजाते हुए उनके वरिष्ठ पंडित दिवाकर को आड़े हाथ लेता है- 'अरे खर प्रभाकर, सुन/भले ही गगन मणि कहलाता है तू/सौर मंडल देवता-गृह/ग्रह-गणों में अग्र/तुझमें व्यग्रता की सीमा दिखती है/अरे उग्र शिरोमणि/तेरा विग्रह ... यानी/देह धारण करना वृथा है/ कारण /कहाँ है तेरे पास विश्राम गृह ?/ तभी तो दिन भर दीन हीन सा/दर-दर भटकता रहता है/ फिर भी क्या समझकर साहस करता है/ सागर के साथ विग्रह-संघर्ष हेतु?'

बादल का क्रोधोत्पन्न वार्तालाप जारी रहता है, बीच में वह समुद्र को समझाने के स्वर धारण करता है और कहता है- 'अरे अब तो/सागर का पक्ष ग्रहण कर ले/कर ले अनुग्रह अपने पर/ और सुख शांति यश का संग्रह कर/अवसर है/अवसर से काम ले, अब तो छोड़ दे उल्टी धुन/ अन्यथा 'ग्रहण' की व्यवस्था अविलंब होगी।'

कलमकार चतुर चितेरे हैं, वे जानते हैं कि सूरज को क्या दण्ड उपयुक्त हो सकता है। कोई उसे न जला सकता है, न बुझा सकता है। अत: उन्होंने उसके आभामंडल (यश) को कलंकित करने की सजा ठीक मानी। यश कलंकित कैसे हो? जब उसमें 'ग्रहण' लग जाये। वह लगा भी।

प्रकृति का यह चित्रण, हाँ ऐसा चित्रण हरेक कलमकार के लिए सम्भव प्रतीत नहीं होता, यह तो महाकवि आचार्य. विद्यासागर के वश की ही बात है। (पृ. २३१)

रचनाकार ने किसी भी स्थल पर प्रकृति सापेक्ष - सत्य को अनदेखा नहीं किया, परन्तु देखना वहाँ ही चाहा है, जहाँ जरूरी लगा है।

इसी तरह खण्ड चार में मात्र दो जगहों पर उन्हें प्रकृति का चित्रण आवश्यक लगा है, प्रथम वहाँ, जहाँ, संध्यावंदन करने के उपरांत कुम्भकार कक्ष से बाहर आता है और उसे दृश्य देखने मिलता है- 'प्रभात कालीन सुनहरी धूप दिखी/धरती के गालों पर/ ठहर न पा रही थी जो।' वर्णन करते हुए वे एक वैचित्रय यहाँ भी प्रस्तुत करते हैं अपनी लेखनी से कि शाम के समय भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुम्भकार को सुबह वाली धूप दीखती है धरती पर। इसे अतिश्योक्ति कहें या कुछ और, परन्तु कवि ने ऐसा लिखा तो है। लिखते समय वे कुछ विस्मृत कर बैठे हैं- ऐसा भी नहीं लगता।

प्रकृति चित्रण का, महाकाव्य में यह अंतिम स्थल है, जहाँ गुरुवर विद्यासागर जी बाढ़ से उफनती नदी के विषय में कलम चलाते हैं- वर्षा के कारण नदी में/नया नीर आया है/नदी वेग-आवेगवती हुई है/संवेग निर्वेग से दूर/उन्माद वाली प्रमदा सी। (पृ. ४४०)

नदी को नारी के रूप में देखने के बाद, उसमें संवेग और निर्वेग को तलाशना और न पाना, मुनि विद्यासागर जैसे महाकवि ही स्पष्ट कर सकते हैं।

एक मायने में महाकाव्य के हरेक स्थल पर, जहाँ भी चित्रण है प्रकृति का, मुनिवर ने वहाँ प्रकृति सौंदर्य के बोध को स्थापित करते हुए भी अध्यात्म का रंग फीका नहीं होने दिया है।

उन्होंने आंख मूंद कर या आंख खोलकर चित्रण नहीं किये हैं, हर चित्रण के पार्श्व में कलमकार अपनी अनुभूति उपस्थिति करने का सुन्दर प्रयास करता है, जबकि सत्य यह भी है कि दिगम्बर सन्त को ऐसी अनुभूतियों से सरोकार नहीं रहा है, न रहेगा।

मैं उन्हें प्रकृति चित्रण में सिद्ध हस्थ मानता हूँ और उनके चित्रण की सराहना करता हूँ।

२९३, गढ़ा फाटक
जबलपुर (म.प्र.)

जन्म कृतार्थ हो

प्रो. डॉ. विमला जैन 'विमल'

जन्म सुमंगलमय वही, जो नहि आगे होय,
अन्तिम जन्म अरिहन्त का, या श्री सिद्ध का होय॥

जन्म मरण का दुक्ख अति, परवस सहता जीव,
जन्मे फिर निर्वाण लें, वे परमात्म सुजीव।

तीर्थंकर के जन्म पर, उत्सव 'जन्म कल्याण'
अन्तिम तन तजते कहा, हुआ 'मोक्ष कल्याण'।

मानव जन्म सुश्रेष्ठ है, बने मुक्ति भरतार,
जो जैसी करनी करे, फलद चतुर्गति भार।

नर्क और तिर्यंच गति, जन्म न लेना भव्य,
'पंच पाप' तज वृष धरहु, सुधर जाय भवितव्य।

'सप्त व्यसन' की लत बुरी, दूर से देना लात,
आगम अरु इतिहास लख, सुजन बिगाड़ी बात।

'दश वृष' की संजीवनी, व्याधि मिटाती जन्म,
स्व-स्वभाव मय आत्मा, शुद्ध-बुद्ध आजन्म।

मानव जन्म कृतार्थ हो, कर सम्यक पुरुषार्थ,
स्व परहित जीवन जगा, मन, वच, तन परमार्थ।

'वृष पथ बढ़' यह श्रेष्ठतम, रत्नत्रय के साथ,
स्वात्म बने परमात्मा: सर्वजीवहित साथ।

मुनिचर्या दुष्कर लगे, करें राष्ट्र कल्याण,
जन्मभूमि रक्षक बने, दे दुष्टन का त्राण।

राष्ट्र भक्त की मृत्यु भी, 'वीरगति' बहुमान,
अमर शहीद की जय बुले, स्वर्णाक्षर जग जान।

जो समाज हित में लगे, जन-जन सेवा नित्य
दुर्बल का सम्बल बने, सेवहि बन आदित्य।

जन्म कहा सार्थक वही, परहित हो बलिदान
राष्ट्र समाज अरु धर्म का, करता जो उत्थान,

क्रमशः बढ़ परमार्थ में 'विमल'ध्येय के संग,
जन्म सुकारथ शुचिंकरम, मरण समाधि के संग।

फिरोजाबाद (उ.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्या एकल विहार का आगम में सर्वथा निषेध है

पं. सुनील जैन 'शास्त्री'

वर्तमान में साधु के एकल विहार पर बहुत चर्चाएँ पत्र-पत्रिकाओं में की जा रही हैं। क्या मुनि एकल विहार सर्वथा नहीं कर सकता?

इसका समाधान यह है कि एकल विहार करने से श्रुतज्ञान के संतान की विच्छित्ति, अनवस्था, संयम का नाश, तीर्थ और गुरु की आज्ञा का भंग, अपयश, अग्नि-जल-विष रोग सर्पादिक्रूर प्राणियों के द्वारा आर्तध्यान से अपनी मृत्यु आदि दोष उत्पन्न होने की संभावना रहती है, **परन्तु जो साधु उत्कृष्ट चारित्र के धारी व ज्ञान एवं बल से सहित हों, उनके लिये एकल-विहार की स्वीकृति आचार्यों ने दी है।** श्री आचार सार अध्याय २, श्लोक नं. २७-२८ में इस प्रकार कहा है-

ज्ञानसंहननस्वांतभावना बलवन्मुने:।
चिरप्रव्रजितस्यैक विहारस्तु मत: श्रुते॥ २७॥
एतद्गुणगणापेत: स्वेच्छाचाररत: पुमान्।
यस्तस्यैकाकिता मा भून्मम जातु रिपोरपि॥ २८॥

अर्थ - (टीका पू. आर्यिका सुपार्श्वमति जी द्वारा)

बहुत काल के दीक्षित, ज्ञान, संहनन, स्वांतभावना से बलशाली मुनि के एकाकी विहार करना शास्त्रों में माना है। परन्तु जो इन गुणों के समूह से रहित स्वेच्छाचारी में रत पुरुष हैं उस मेरे शत्रु के भी एकाकी विहार कभी भी नहीं हो।

भावार्थ : जो ज्ञानबल, संहननबल, मनोबल और **शुभ भावना से युक्त है वह एकाकी विहार कर सकता है।** ज्ञानबल, विशिष्ट, आध्यात्मिक ज्ञान का धारी हो। संहननबल, उत्कृष्ट संहनन का धारी हो, अर्थात् भूख, प्यास सहन करने की शक्ति वाला हो, आत्मानुभूति से अपने मन को वश में करने वाला हो, चिरकाल का दीक्षित हो, ऐसा विशिष्ट मुनि एकाकी विहार करने वाला हो सकता है। परन्तु जिसमें यह गुण नहीं है, जो स्वेच्छाचार में रत रहता है अर्थात् सोने, बैठने, मलमूत्र के त्याग में वस्तु के ग्रहण करने में स्वच्छंद होकर प्रवृत्ति करता है ऐसा मुनि कभी एकाकी विहार न करे।

आचार्य खेद के साथ कहते हैं कि इन गुणों से रहित साधु, मेरा शत्रु भी हो, तो भी एकाकी विहार न करे।

उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट है कि श्लोकों में कथित गुणों का धारी साधु एकल विहार भी कर सकता है। परन्तु इन गुणों से रहित साधु यदि एकल विहार करता है तो उपरोक्त संभावनाएँ होने से धर्मनाश या निंदा का कारण हो सकता है।

कुछ विद्वानों का ऐसा कहना है कि तीन उत्तम संहनन वाले मुनिराज ही एकल विहार कर सकते हैं। वर्तमान में तीन उत्तम संहनन का अभाव होने से कोई भी साधु एकल विहार नहीं कर सकता। उन विद्वानों का ऐसा मानना उचित नहीं लगता है। क्योंकि यदि यही विचार उचित था तो फिर आचार्यों को स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए था कि पंचमकाल में हीन संहनन होने से एकल विहार सर्वथा निषिद्ध है। परन्तु किसी भी आचार्य का ऐसा मत नहीं मिलता। श्री मूलाचारकार ने भी एकल विहारी साधु की परिभाषाएँ दी हैं, तथा बीसवीं शताब्दी के महान् आचार्यों ने चिरकाल तक एकल विहार किया है, अत: उपरोक्त मान्यता उचित नहीं।

इस प्रश्नोत्तर के द्वारा एकल विहार का समर्थन नहीं किया जा रहा है, पर पूर्णतया निषेध भी आगम में नहीं है, इस बात का प्रतिपादन किया है। यदि हम बीसवीं शताब्दी के उत्कृष्ट चारित्र के धनी मुनिराजों के जीवन-चरित्र पर दृष्टि डालें तो बहुत से मुनिराजों ने वर्षों तक अकेले ही विहार किया था। फिर भी उनके चारित्र में कभी शिथिलाचार दृष्टिगोचर नहीं हुआ। अत: शिथिलाचार पूर्णतया विरोध योग्य मानना चाहिए, एकल विहार नहीं।

९६२, सेक्टर-७,
आवास विकास कॉलोनी
आगरा (उ.प्र.)
फोन ०५६२-२२७७०९२

जिनभाषित के लिए प्राप्त दान राशि

- श्रीमान् प्रेमचन्द्र जैन 'तेलवाले', मेरठ (उ.प्र.) के प्रपौत्र चि. उत्कर्ष जैन (सुपुत्र श्री राकेश जैन) एवं सौ. शलिका जैन के विवाहोपलक्ष में 500 रुपये प्राप्त।
- श्री ताराचन्द पाटनी 95, मेन सेक्टर, भीलवाड़ा (राजस्थान) द्वारा 100 रुपये प्राप्त।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महावीर के सिद्धान्त

संकलन : सुशीला पाटनी

अहिंसा

प्राणियों को नहीं मारना, उन्हें नहीं सताना। जैसे हम सुख चाहते हैं, कष्ट हमें प्रीतिकर नहीं लगता, हम मरना नहीं चाहते, वैसे ही सभी प्राणी सुख चाहते हैं कष्ट से बचते हैं और जीना चाहते हैं। हम उन्हें मारने/सताने का भाव मन में न लायें, वैसे वचन न कहें और वैसा व्यवहार/कार्य भी न करें। मनसा, वाचा, कर्मणा प्रतिपालन करने का महावीर का यही अहिंसा का सिद्धांत है। अहिंसा, अभय और अमन चैन का वातावरण बनाती है। इस सिद्धान्त का सार-सन्देश यही है कि 'प्राणी के प्राणों से हमारी संवेदना जुड़े और जीवन उन सबके प्रति सहायी/सहयोगी बने।'

तोप, तलवार से झुका हुआ इंसान एक दिन ताकत अर्जित कर पुन: खड़ा हो जाता है।

अनेकान्त

भगवान महावीर का दूसरा सिद्धान्त अनेकान्त का है। अनेकान्त का अर्थ है- सह-अस्तित्व, सहिष्णुता, अनाग्रह की स्थिति। इसे ऐसा समझ सकते हैं कि वस्तु और व्यक्ति विविध धर्मी हैं।

अपरिग्रह -

भगवान महावीर का तीसरा सिद्धान्त अपरिग्रह का है। परिग्रह अर्थात् संग्रह-यह संग्रह मोह का परिणाम है। जो हमारे जीवन को सब तरफ से घेर लेता है, जकड़ लेता है, परवश/पराधीन बना देता है वह है परिग्रह। धन पैसा को आदि लेकर प्राणी के काम में आने वाली तमाम वस्तु/सामग्री परिग्रह की कोटि में आती है।

आत्म स्वातन्त्र्य

भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित एक सिद्धांत आत्म स्वातन्त्र्य का है, इसे ही अकर्त्तावाद या कर्मवाद कहते हैं। अकर्त्तावाद का अर्थ है- 'किसी ईश्वरीय शक्ति/सत्ता से सृष्टि का संचालन नहीं मानना।'

यह सिद्धान्त इसलिए भी प्रासंगिक है कि हमें अपने किए गए कर्म पर विश्वास हो और उसका फल धैर्य, समता के साथ सहन करें। वस्तु का परिणमन स्वतंत्र/स्वाधीन है। मन में कर्तृत्व का अहंकार न आये और ना ही किसी पर कर्तृत्व का आरोप हो। इस वस्तु- व्यवस्था को समझकर शुभाशुभ कर्मों की परिणति से पार हो, आत्मा की शुद्ध दशा प्राप्त करें। बस यही धर्म चतुष्टय भगवान महावीर स्वामी के सिद्धान्तों का सार है। व्यक्ति जन्म से नहीं कर्म से महान् बनता है। यह उद्‌घोष भी महावीर की चिन्तनधारा को व्यापक बनाता है। इसका आशय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति मानव से महामानव, कंकर से शंकर और भील से भगवान बन सकता है। नर से नारायण और निरंजन बनने की कहानी ही महावीर का जीवन दर्शन है।

मनीषियों के विचार

अहिंसा का सिद्धान्त सबसे पहले गहन रूप से भली-भाँति तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित एवं प्रचारित किया गया। इसमें २४ वें तीर्थंकर भगवान महावीर वर्द्धमान का उल्लेखनीय योगदान है। भगवान बुद्ध और फिर महात्मा गाँधी ने भी मन, वचन, काय से अहिंसा के सिद्धान्त को आचरण में उतारा।

प्रो. तानयुन शान (चीन)

महावीर के वचन मानवी-आचरण की उज्जवलतम प्रस्तुति है। अहिंसा का महान सिद्धांत, जिसे पश्चिम जगत में 'ला आफ नान-वायलेंस' के नाम से जाना जाता है, सर्वाधिक मूलभूत सिद्धांत है, जिसके द्वारा मानवता के कल्याण के लिए आदर्श संसार का निर्माण किया जाता है।

डॉ. एल्फ्रेड डब्ल्यू पार्कर (इंग्लैण्ड)

भगवान महावीर जिन्होंने भारत के विचारों को उदारता दी, आचार को पवित्रता दी, जिसने इन्सान के गौरव को बढ़ाया, उसके आदर्श को परमात्मा-पद की बुलंदी तक पहुँचाया, जिसने इन्सान और इन्सान के भेदों को मिटाया, सभी को धर्म और स्वतंत्रता का अधिकारी बनाया, जिसने भारत के अध्यात्म-संदेश को अन्य देशों तक पहुँचाने की शक्ति दी। सांस्कृतिक स्त्रोतों को सुधारा, उन पर जितना भी गर्व करें, थोड़ा ही है।

डॉ. हेल्फुथफान गलाजेनाप्प (जर्मनी)

महावीर का जीवन अनन्तवीर्य से ओत-प्रोत है। अहिंसा का प्रयोग उन्होंने स्वयं अपने ऊपर किया और फिर सत्य और अहिंसा के शाश्वत धर्म को सफल बनाया। जो काल को भी चुनौती देते हैं, ऐसे उन भगवान को 'जिन और वीर' कहना सार्थ है। आज के लोगों को उनके आदर्श की आवश्यकता है।

डॉ. फर्नेडो बेल्लिन फिलिप (इटली)

भगवान महावीर सत्य और अहिंसा के अवतार थे। उनकी पवित्रता ने संसार को जीत लिया था। भगवान महावीर का नाम यदि इस समय संसार में पुकारा जाता है तो उनके द्वारा प्रतिपादित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अहिंसा' के सिद्धांत के कारण अहिंसा धर्म को अगर किसी ने अधिक से अधिक विकसित किया है तो वे भगवान महावीर ही थे।

महात्मा गाँधी

भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत मुझे बहुत प्रिय है। मेरी प्रबल अभिलाषा है कि मैं मृत्यु के बाद जैन-धर्म के परिवार में जन्म धारण करूँ।

जार्ज वर्नाड शा

यदि संसार को तबाही से बचाना है और कल्याण के मार्ग पर चलाना है तो भगवान महावीर के संदेश और उनके बताए हुए रास्ते को ग्रहण किए बिना और कोई रास्ता नहीं।

सर्वपल्ली राधकृष्णन

भगवान महावीर पुनः जैनधर्म के सिद्धांत को प्रकाश में लाए। भारत में यह धर्म बौद्धधर्म से पहले मौजूद था। प्राचीन काल में असंख्य पशुओं की बलि दे दी जाती थी। इस बलि-प्रथा को समाप्त कराने का श्रेय जैनधर्म को है।

बाल गंगाधर तिलक

अहिंसा के महान प्रचारक केवल भगवान महावीर ही थे। उन्होंने साढ़े १२ वर्ष के तप, साधना और त्याग के बाद सारे विश्व को यदि अहिंसा का जन संदेश न दिया होता तो संसार में अहिंसा का नामो-निशान न होता।

धर्मानन्द कौशाम्बी

भगवान महावीर ने डंके की चोट पर मुक्ति का संदेश घोषित किया कि धर्म मात्र सामाजिक रूढ़ि नहीं, बल्कि वास्तविक सत्य है। धर्म में मनुष्य और मनुष्य का भेद स्थायी नहीं रह सकता। कहते हुए आश्चर्य होता है कि महावीर की इस महान शिक्षा ने समाज के हृदय में बैठी हुई भेद-भावना को बहुत शीघ्र नष्ट कर दिया और सारे देश को अपने वश में कर लिया।

रविन्द्रनाथ टैगोर

भगवान महावीर ने स्त्री जाति का महान् सुधार किया। जिसका भय महात्मा बुद्ध को था, उसको महावीर ने कर दिया। नारी जाति के वे उद्धारक और अग्रदूत थे। भगवान महावीर के उपदेश शांति और सुख के सच्चे रास्ते हैं। यदि मानवता उनके सद्उपदेशों पर चले तो वह अपने जीवन को आदर्श बना सकती है।

विनोबा

भगवान महावीर सारे प्राणियों का कल्याण करने वाले आध्यात्मिक महापुरुष हुए हैं।

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

मैं स्वयं को धन्य मानता हूँ कि मुझे भगवान के प्रांत में जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अहिंसा धर्म जैन अनुयायियों की विशेष सम्पति है। संसार के किसी और धर्म ने अहिंसा के सिद्धान्त का इतना प्रचार नहीं किया जितना जैन धर्म ने किया।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

अगर भगवान महावीर के बतलाए हुए सिद्धांतों पर संसार चले तो लोगों में कोई दुःख व झगड़ा न हो। विश्व में शांति बनी रहे। मेरे देश को गर्व है कि भगवान महावीर ने समस्त संसार को शांति और अहिंसा का संदेश दिया।

जवाहरलाल नेहरु

जो इन्द्रियों को जीत सकता है, वही सच्चा जैन है। अहिंसा बहादुरों और वीर पुरुषों का धर्म है, कायरों का नहीं। जैनियों को इस बात पर गर्व होना चाहिए कि कांग्रेस भगवान महावीर के सिद्धांतों का सारे भारतवर्ष में पालन करा रही है।

सरदार पटेल

भगवान महावीर की सुन्दर और प्रभावशाली शिक्षाओं का अगर हम पालन करें तो रिश्वत, बेईमानी, भ्रष्टाचार अवश्य ही समाप्त हो जाए।

लालबहादुर शास्त्री

भगवान महावीर ने अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्त और सहिष्णुता का मार्ग हमें बताया। भगवान महावीर के बताये हुए मार्ग पर चलकर ही हम अपनी कठिनाईयों का समाधान प्राप्त कर सकते हैं।

फखरुद्दीन अली अहमद

जैन धर्म मानव को ईश्वरत्व की ओर ले जाता है और सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान व सम्यक् आचरण के जरिए पुरुषार्थ से उसे परमात्म पद प्राप्त करा देता है।

डॉ. मुहम्मद हाफिज (भारत)

भगवान महावीर ने प्राणी मात्र के कल्याण के लिए महान संदेश दिया है। ताकि सभी प्राणी शांति से रह सकें। हम उनके बताए रास्ते पर चलकर उनके योग्य उत्तराधिकारी बनें।

जस्टिस टी.के. टुकोल (भारत)

महावीर ने एक ऐसी साधु संस्था का निर्माण किया, जिसकी भित्ति पूर्ण अहिंसा पर निर्धारित थी। उनका अहिंसा परमोधर्मः का सिद्धान्त सारे संसार में २५०० वर्षों तक अग्नि की तरह व्याप्त हो गया। अन्त में इसने नव भारत के पिता महात्मा गाँधी को अपनी ओर से आकर्षित किया। यह कहना अतिश्योक्ति पूर्ण नहीं है कि अहिंसा के सिद्धान्त पर ही महात्मा गाँधी ने नवीन भारत का निर्माण किया।

टी.एस. रामचन्द्रन (अध्यक्ष-पुरातत्व विभाग)

आर.के. मार्बल प्रा. लि.,
मदनगंज-किशनगढ़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गतांक से आगे

आत्मा और शरीर की भिन्नता : चिकित्सीय विज्ञान की साक्ष्य

डॉ. प्रेमचन्द्र जैन

हृदय रोग विशेषज्ञ माइकेल साबोम (Michael Sabom) का विश्लेषण :

माइकेल साबोम हृदय रोग विशेषज्ञ के साथ-साथ 'मृत्यु-निकट अनुभव' के शोधकर्ता भी हैं। ये लिखते हैं कि उन्होंने डॉक्टर स्पेट्रजलर द्वारा रीनोल्ड की शल्य क्रिया के सभी अंकित अभिलेखों की प्रतिलिपियों का, शल्यक्रिया के दौरान रीनोल्ड द्वारा अनुभूत सभी घटनाओं और सुरंग की यात्रा के वृतांत से मिलान किया और पाया कि उस समय रीनोल्डस का मस्तिष्क उस कम्प्यूटर के समान था जिसमें से विद्युत प्रदाय का प्लग निकाल दिया गया हो अर्थात् पूर्ण निष्क्रिय और इसप्रकार के मृत-मस्तिष्क को न कोई मतिभ्रम हो सकता है और न ही वह कोई गलत गोला दाग सकता है अर्थात् अन्यथा सोच सकता है और न ही निश्चेतक ड्रग्स या अन्य ड्रग्स की दशा में कोई क्रिया या प्रतिक्रिया कर सकता है। माइकेल साबोम आगे लिखते हैं कि रीनोल्ड के शरीर में मृत्यु के सभी लक्षण थे। मृत्यु की सभी चिकित्सा नैदानिक कसौटियाँ थीं, जीवन के कोई चिन्ह नहीं थे। तो क्या वह मृत्यु थी ? और यादि मृत्यु थी तब इस दशा में रहते हुये उसके अनुभवों को क्या कहा जा सकता है ?

आंतरिक औषधि के विशेषज्ञ बारबरा रोमर (Barbara Romer) की शोध :

सबसे पहले १९७० में डॉक्टर बारबरा रोमर का सामना एक ऐसे रोगी से हुआ जो मृत्यु निकट अनुभव से गुजर चुका था। तब से १९९४ तक उसने ऐसे ६०० से अधिक रोगियों का साक्षात्कार लिया जिन्हें मृत्यु-निकट अनुभव था। साक्षात्कारोपरांत 'वह पूर्ण रूपेण आश्वस्त हो गयी कि हमारी मृत्यु उपरांत कुछ न कुछ जीवित अवश्य रहता है'

ऐसे लोगों ने साक्षात्कार के समय डॉ. रोमर से कहा कि वे लोग समान अनुभव वाले लोगों से एक-दूसरे के अनुभवों का आदान-प्रदान करना चाहते हैं। तद्नुसार डॉ. रोमर ने ऐसे लोगों का एक मासिक आश्रय- समूह (Monthly support group) बनाना प्रारंभ कर दिया जो संसार के इस प्रकार के समूहों में सबसे बड़ा था। बारबरा रोमर लिखती हैं कि वे ऐसे लोगों के अनुभवों की कहानियाँ सुनना चाहती थीं, अत: उन्होंने ऐसे एक समूह की बैठक में भाग लिया इसमें दर्जनों मध्य आयु के पुरुष महिलाएँ एक-दूसरे के अनुभवों को परस्पर बाँटने के लिये एकत्रित थे। 'उनमें से बहुतों के लिये यह एक जीवन परिवर्तित करने वाली आध्यात्मिक यात्रा थी' (For many of them, was a life altering spiritula journey)। ऐसे एक रोगी राबर्ट मिलहम (Robert Milham) ने बताया कि 'हृदयाघात के समय उसके हृदय की धड़कन बंद हो गई और दर्द काफूर हो गया और मैं अपने शरीर के ऊपर लटकने की स्थिति में आ गया। मेंने अपने को एक स्ट्रेचर पर लेटा एवं लोगों को उसपर पैडल मारते हुये देखा' उसने आगे कहा कि 'मौत के इस स्पर्श ने उसे निरे स्वार्थी, स्वकेन्द्रित जीवन से दूसरों को अधिक देने वाला व्यक्ति बना दिया।'

एक अन्य मिष्टभाषी तकनीक उद्यमी केन एमिक (KenAmick) ने डॉक्टर रोमर को एक एलर्जीजन्य प्रतिक्रिया (allergic reaction) के फलस्वरूप हुये मृत्यु निकट अनुभव बताया कि उस समय उसकी श्वास रुक गई थी और उसका पूरा शरीर नीला पड़ गया था। उसने आगे बताया 'मैं रंग देख सकता था, मैं सुन सकता था। मैं भय और राहत जैसे संवेगों को महसूस कर सकता था' यह कहते हुये वह रुकता है मानो वह उस स्थिति का पुन: अनुभव कर रहा हो 'तब वह टेबल पर पड़ी नीले रंग की वस्तु क्या थी ? वह मैं था। मैं जानता हूँ कि वह मैं था। इसने मुझे भयभीत भी किया किन्तु वास्तव में वह मैं नहीं था, यह तो सही रूप में मेरा शरीर था।'

यद्यपि उद्धृत रोगियों के संबंध में यह प्रमाण नहीं है कि वे उस समय नैदानिक रूप से मृत अवस्था में थे (clinical dead) किन्तु प्रश्न तो मृत्यु-निकट अनुभव का है। आखिर वह क्या था जो उन्हें सम्मोहित कर रहा था ? उन्हें इस बात से संतोष रहा कि वे ऐसा अनुभव करने वाले अकेले नहीं है और न ही सनकी या पागल। पूरे संसार में ऐसा अनुभव करने वाले अनेक व्यक्ति हैं।

डच हृदयरोग विशेषज्ञ पिम वान लोमेल (Pin Van Lommel) के अनुभव नवीन साक्ष्य, नवीन सिद्धांत -

पिम वान लोमेल का एक ब्रिटिश मेडीकल जर्नल दि लानसेट (The Lancet) में प्रकाशित एक शोध लेख में एक ४४ वर्षीय हृदयरोगी का विवरण दिया है। जिसकी हृदय कि धड़कन बंद हो गई थी तथा जिसे मृत्यु निकट अनुभव हुआ था। उसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एम्बुलेंस द्वारा तुरंत अस्पताल लाया गया। डॉक्टरों ने डेफीब्रीलेटर्स नामक यंत्रों की सहायता से उसके हृदय को पुन: चालू कर दिया। एक नर्स ने उसके नकली दांत निकाले ताकि उसके गले में श्वास लेने वाली नलिका डाली जा सके। हृदय चालू होने पर उसे आइ. सी.यू. (Intensive Care Unit) में भेज दिया गया। एक सप्ताह बाद उस रोगी ने दांत निकालने वाली नर्स को देखा और उसे पहचान कर कहा 'तुमने मेरे मुँह से नकली दांत निकाले थे' यद्यपि दांत निकालते समय वह रोगी सम्मूर्च्छित से नैदानिक मृत्यु की अवस्था में था। उस रोगी ने अस्पताल में अपनी चिकित्सा के सभी अन्य विवरण पूर्णत: सही-सही रूप में वर्णन किये जो उसकी आत्मा ने देह मुक्त अवस्था में देखे थे।

मृत्यु -निकट अनुभव की आवृत्ति की दर क्या है, इसे मापने के लिये लोमेल और उसके सहशोधकर्ताओं ने ३४३ अन्य ऐसे रोगियों का साक्षात्कार लिया जिन्हें हृदयाघात हुआ था और जो बाद में जीवित बच गये थे। पता चला कि १८ प्रतिशत रोगियों को हृदय बंद होने की स्थितियों के बावजूद उनमें स्पष्ट चेतना थी। इन रोगियों ने उस दशा में हुई शांति की अनुभूति से लेकर मृत्यु निकट अनुभवों का विस्तार से वर्णन किया।

इसीप्रकार कुछ ब्रिटिश शोधकर्ताओं द्वारा किये गये एक अध्ययन, जो रीससिसियेशन (Resusciation) जर्नल में प्रकाशित हुआ, मैं यह पाया गया कि ११ प्रतिशत ऐसे रोगियों को उनकी अचेतन अवस्था में हुये कार्यों की स्मृति है और ६ प्रतिशत ऐसे रोगी जो हृदयाघात के बाद मिली चिकित्सा से ठीक हो गये, को मृत्यु निकट अनुभव हुआ था।

वान लोमेल एवं ये ब्रिटिश शोधकर्ताओं का विश्वास है कि उक्त निष्कर्ष यह संकेत करते हैं कि क्रियाशील मस्तिष्क की अनुपस्थिति में भी चेतना रह सकती है। वान लोमेल लिखते हैं 'मस्तिष्क की तुलना एक टी.वी. सेट से की जा सकती है और टी.वी. कार्यक्रम आपके टी.वी. सेट में नहीं हैं।', (यह तो अन्य स्थान से प्रसारित होता है।)

तो फिर चेतना कहाँ है? क्या यह शरीर के प्रत्येक कोशिका (Cell)में हैं? और वान लोमेल कहते हैं 'मेरा चिन्तन इसी ओर है' हम जानते हैं कि प्रतिदिन मानव शरीर की ५० अरब कोशिकाएँ (Cells) मृत हो जाती हैं और उतनी ही नई उत्पन्न होती हैं। इससे निष्कर्ष निकलता है कि लगभग वे सभी कोशिकाएँ जो मुझे या आपको बनाती हैं वे सब नई हैं और तब भी हमें यह अनुभव नहीं होता कि हम पहले से कुछ बदल गये हैं। इस तथ्य से यह निष्कर्ष निकलता है कि हमारे शरीर की सभी कोशिकाओं के मध्य परस्पर कोई संचार सूचना पद्धति होनी चाहिए अर्थात् केवल मस्तिष्क ही नहीं अपितु मांसपेशियों, खोपड़ी, आँतें, आहारनली, त्वचा, रक्त में रहने वाली, अरबों-खरबों असंख्य कोशिकाएँ एक नेटवर्क के अधीन एक दूसरे से बातें करती हैं जो हमारे अनुभवों की चेतना को तब भी बनाए रखते हैं जब कि अरबों की संख्या में कोशिकाएँ मृत हो जाती हैं और अरबों नई उत्पन्न होती रहती हैं। यदि तथ्य ऐसा ही है तो उस दशा में भी वे कोशिकाएँ जीवित रहती हैं जब किसी व्यक्ति को मस्तिष्क की दृष्टि से मृत घोषित कर दिया गया हो और तभी वह उस नैदानिक मृत्यु की दशा में भी घटित उन घटनाओं को देख सकता है जो अन्यथा अबोधगम्य और अव्याख्येय ही हैं।

यदि ऐसा है तो इसका क्या अर्थ है कि मस्तिष्क के मृत हो जाने पर 'मन' बना रहता है? उदाहरण स्वरूप क्या हमें मृत मस्तिष्क के अंगों का प्रत्यारोपण के लिये निकाले जाने पर पुनर्विचार करना चाहिए?

अत: मृत्यु निकट अनुभव हमें उन प्रश्नों के पुनर्निरीक्षण के लिए बाध्य करते हैं जो हम समझते हैं कि उनका उत्तर हमारे पास है, मृत्यु क्या है? चेतना कहाँ रहती है? क्या विज्ञान आत्मा को भी पा सकता है? खोज कर सकता है?

उपसंहार - चिकित्सा वैज्ञानिकों के उक्त अनुभूत सत्य घटनाएँ, विश्लेषण और शोध से आत्मा के संबंध में जैन दर्शन की सभी मान्यताओं की पुष्टि होती है।

(अ) आत्मा और शरीर दो भिन्न पदार्थ हैं। डॉ. स्पेट्जलर द्वारा मस्तिष्क रोगी पाम रीनोल्ड्स की शल्यक्रिया के दौरान अनुभूत विवरण यह सिद्ध करते हैं चेतनाशून्य शरीर हो जाने या सभी नैदानिक मापदण्डों के अनुसार शरीर मृत या निष्क्रिय होने पर भी शरीर से पृथक कोई तत्त्व या पदार्थ, जिसे आत्मा ही कहा जा सकता है, का अस्तित्त्व है जो ज्ञान, दर्शन और चेतना से युक्त है तभी तो पाम रीनोल्ड्स तथा ऊपर वर्णित अन्य रोगियों (राबर्ट मिलहम आदि) ने शल्यक्रिया के उपरान्त शल्यक्रिया के सूक्ष्म से सूक्ष्म विवरण मृतप्राय रहने पर भी ज्यों के त्यों वर्णन कर दिये। वैज्ञानिकों की भी इस घटना पर **यही प्रतिक्रिया थी कि विज्ञान को आत्मा की संभावना पर भी विचार करना चाहिए जो शरीर से पृथक होकर भी देख और अनुभव कर सकती है। रोगी राबर्ट मिलहम का तो स्पष्ट कथन था कि निश्चेतन (मृत) अवस्था में जो उसने देखा 'वह वास्तव में मैं नहीं था यह तो सही रुप में मेरा शरीर था। अर्थात मैं (आत्मा) और शरीर दो भिन्न पदार्थ हैं।'**

(ब) आत्मा स्वभाव से ही ज्ञान, दर्शन और चेतनामय है- निश्चेतन और सभी चिकित्सकीय मापदण्डों से मृत रोगियों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वारा सूक्ष्मातिसूक्ष्म क्रियायें जो अतिसंवेदनशील यंत्रों पर अंकित हो रही थीं, का अवलोकन और बाद में उनका ज्यों का त्यों वर्णन न केवल वर्णन बल्कि उस दशा में सुख-दुख का अनुभव होने से यह स्वत: ही सिद्ध है कि आत्मा मूलत: ज्ञान, दर्शन, चेतनामय है।

(स) शरीर एक पुद्‌गल द्रव्य है जिसमें आत्मा के संयोग से ही सुख-दुख आदि संवेगों का आभास होता है। आत्मतत्त्व विहीन शरीर को इस प्रकार के अनुभव नहीं होते। हाँ, जब आत्मा अंतिम रूप से शरीर से स्वतंत्र हो जाती है अर्थात् आठों कर्मों के नाश हो जाने पर मुक्त अवस्था प्राप्त कर लेती है तब वह अनन्त चिरस्थायी सुख में लीन रहती है। इसकी एक झलक रोगी पाम रीनाल्ड्स को तब हुई थी जब उसकी आत्मा शल्यक्रिया के दौरान शरीर से पृथक होकर अपनी शल्यक्रिया को देख रही थी, उसने अपनी मृत दादी, रिश्तेदार आदि को देखकर प्रसन्नता का अनुभव किया, उस समय वह अपनी वास्तविक पीड़ा का अनुभव नहीं कर रही थी बल्कि वह तो बर्फ के समान ठंडे जल में गोता लगा रही थी, जो आल्हादकारी था। सही तो है, आत्मा को कोई कष्ट नहीं होता, कष्ट तो उसे संयोगी पर्याय में होता है, भले ही किसी भी शरीर में रहे। इसीप्रकार राबर्ट मिलहम नामक एक अन्य हृदय रोगी ने बताया था कि हृदयाघात के कारण उसकी हृदय धड़कन बन्द होने पर उसने पाया कि वह (उसकी आत्मा) अपने शरीर से अलग होकर शरीर के ही ऊपर लटक कर सारी गतिविधियों का निरीक्षण कर रहा था। उस समय उसका दर्द काफूर हो गया था जबकि हृदयाघात में शरीर को असहनीय पीड़ा होती है। इससे भी सिद्ध है कि आत्मा को नहीं शरीर को ही कष्ट आदि होते हैं।

(द) आत्मा का अस्तित्त्व है और वह अजर-अमर और शाश्वत है। अशरीरी है।

उपरोक्त वर्णित सभी घटनाओं से स्वत: सिद्ध है कि शरीर मृत होता है, आत्मा कभी भी मृत नहीं होती। पाम रीनोल्ड, राबर्ट मिलहम आदि के अनुभव संकेत ही नहीं स्पष्टतया सिद्ध करते हैं कि शरीर से पृथक होकर भी आत्मा देख सकती है, संवेगों का अनुभव कर सकती है। इन घटनाओं ने वैज्ञानिकों को इस दिशा में सोचने को बाध्य किया कि उन्हें अब आत्मा की संभावना पर भी विचार करना चाहिए जो शरीर के विभिन्न अंगों से पृथक तत्व है। पाम रीनोल्ड आदि की आत्मा शरीर से पृथक होकर डॉक्टर के कंधों के ऊपर स्थित होकर अपने शरीर के ऑपरेशन को देख रही थी, इससे सिद्ध है कि आत्मा निराकार और अशरीरी रहती है।

(य) जीव/आत्मा असंख्य प्रदेशी है और जिस समय जिस शरीर में रहती है उसके सभी प्रदेशों में व्याप्त रहती है।

हृदयरोग विशेषज्ञ पिम वान लोमेल विश्वास पूर्वक कहते हैं कि मानव शरीर में अरबों-खरबों (असंख्यात) कोशिकाएँ (प्रदेश) हैं। इन सभी कोशिकाओं में चेतना रहती है (चेतना तत्व आत्मा का ही गुण है) प्रतिदिन लगभग ५० अरब कोशिकाएँ मृत होती हैं तथा उतनी ही नई उत्पन्न होती हैं किन्तु हमारी रचना, स्मृति आदि पूर्ववत बनी रहती है। इसका कारण जैन दर्शन का उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सिद्धान्त ही है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शरीर मृत होने पर या किसी जीव की मृत्यु हो जाने पर जब उसकी आत्मा नया शरीर धारण करती है तो वह उस नये शरीर के अनुरूप अपने प्रदेशों का विस्तार या संकोच कर लेती है। प्रदेश अभी भी असंख्य रहते हैं किन्तु शरीर छोटा-बड़ा दिखाई दे सकता है।

चिकित्सा विज्ञान अब इस खोज में लगा है कि मृत्यु-निकट अनुभव आखिर होते क्यों हैं और जब आत्मा शरीर से निकलकर अपने ही मृतवत शरीर की शल्यक्रिया देख सकती है तो शल्यक्रिया के बाद वह पुन: उसी शरीर को क्यों ग्रहण कर लेती है, अन्य शरीर क्यों नहीं? जैन दर्शन और जैनाचार्यों ने इन प्रश्नों का उत्तर हजारों वर्ष पूर्व दे चुके हैं कि दूसरे भव का आयु बंध हो जाने के बाद शेष बचे भुज्यमान आयु के निषेक अपना पूरा काल भोग कर ही समाप्त होंगे अर्थात् व्यक्ति का मरण होगा, इसके पूर्व नहीं। तभी तो ऐसे जीव गंभीर दुर्घटनाओं में जहाँ अनेकों का प्राणघात होता है, बच जाते हैं, विष भक्षण, सर्पदंश आदि से भी बच जाते हैं। स्पष्ट है कि हृदयाघात, विषभक्षण या गंभीर दुर्घटना (एक्सीडेन्ट) होने पर उस जीव को मृत्यु-निकट अनुभव संभव है जिसकी भुज्यमान आयु शेष है। संभवत: यही कारण है कि मृत्यु निकट अनुभव उस प्रकार की परिस्थिति उपस्थित होने पर सभी को नहीं होते, मात्र कुछ को (वैज्ञानिकों के सर्वेक्षण के अनुसर ११ प्रतिशत से लेकर १८ प्रतिशत व्यक्तियों को) ही होते हैं।

विज्ञान सतत खोज, प्रयोग और पर्यवेक्षण का विषय है और वैज्ञानिकों की अनेक कई खोजों के कारण स्वयं विज्ञान ने अपने पुराने सिद्धान्तों में परिवर्तन किया है जिससे जैन धर्म की पुष्टि होती है। हो रही है।

निदेशक,
जवाहर लाल नेहरु स्मृति महाविद्यालय,
गंज बासौदा (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राकृतिक चिकित्सा

'आरोग्यं शरणं गच्छामि'

डॉ. वन्दना जैन

स्वास्थ्य हमारा सबसे बड़ा धन है। यह हमारा स्वरुप सिद्ध अधिकार भी माना गया है। इसकी साज संभाल हम कैसे करें, कि वह सदा खिला-खिला रहे, हमारे धर्म साधन में काम आये और हम अपने बड़े-बूढ़ों का चिरंजीव भव का आशीर्वाद पूरा कर सकें। इसके लिये हमें कुछ सावधानियाँ बरतनी होंगी। जीवन में सघन हो रहे तनाव अस्वास्थ्यकर ताकतों को हम कैसे शिकस्त दें। क्या खायें-पीयें, अलग-अलग रोगों में क्या सतर्कता बरतें। दिनोंदिन बिगड़ते पर्यावरण में अपने परिवार व खुद को कैसे स्वस्थ बनाये रखें। बारहों मास अलग-अलग ऋतुओं में कैसे अपनी संभाल करें, जानने की कोशिश करते हैं।

यह जीवन बदलते मौसम की तरह है, कभी तूफानी सर्द हवायें, कभी चिलचिलाती तेज गर्मी। कभी रुखा-सूखा उदास पतझड़, तो कभी हरा-भरा बसंत। कभी बारिस की फुहारें; कभी सालों-साल सूखा ही सूखा। पर सच्चा राही वही है, जो हर मौसम का रस ग्रहण करते हुए समान रुप से जीवन को खुशियों से भरा पूरा बनाये रखे। जिसे जीवन सूत्र की क्षण भंगुरता और उसके अस्थिर स्वरूप का बोध हो लेकिन इससे उसकी जीवन शक्ति और खिल उठे, उस फूल की तरह जो कड़ी धूप और हवा के तेज झोंके सहकर भी टहनी पर खिला रहता है। उस पानी के बुल-बुलों की तरह जो जल की तरंगों पर तैरते हैं, मगर टूटते नहीं। उस चांद की तरह जो सारा-सारा दिन अपना अस्तित्व मिटता देखकर भी विचलित नहीं होता और रात घिरते ही जीवंत हो उठता है।

सुख में दुख में कठिन और विपरीत घड़ियों में आप विरत हुए बगैर अपने स्वास्थ्य की अर्चना में जुटे रहें जीवन का उत्साह सदैव अक्षुण्य बना रहे ऐसी जीवन पद्धति को हम अपनायें।

मार्निंग वॉक - प्रातःकाल की सैर व्यायाम में सर्वोत्तम मानी गई है। प्रातः मुहूर्त का समय निद्रा त्याग का सर्वोत्तम समय है। इस समय की वायु के एक-एक कण में संजीवनी शक्ति का अपूर्व सम्मिश्रण होता है। ज्ञान तंतु रात्रि में विश्राम के बाद नव शक्ति युक्त होते हैं, अतः प्रातःकालीन एकांत व सर्वथा शुद्ध वातावरण में मस्तिष्क एकदम उर्वरक हो जाता है, इस समय वातावरण में

आक्सीजन (प्राणवायु)	२१%
नाइट्रोजन	७९ %
कार्बनडाईऑक्साइड (दूषित वायु)	०.००३% होती है

जो कि वाहन आदि के चलने से, कारखानों आदि के प्रदूषण से पृथ्वी की गर्म वाष्प ऊपर उठती है, तब कार्बनडाई ऑक्साइड की मात्रा कई गुना बढ़ जाती है। जो मनुष्य जीवन तथा उनकी दीर्घायु के लिए घातक है। इसलिए हमें मॉर्निंग वॉक यानि प्रातःभ्रमण अवश्य करना चाहिए।

वाकिंग का मतलब है तेज-चाल/एक मिनिट में १२० कदम चलना। मुँह बंद करके चलना चाहिए। थक जाने पर कमर पर हाथ देते हुए, छाती चौरस करके श्वांस को सामान्य रखना चाहिए। चहल कदमी और वाकिंग में यही अंतर है।

फास्ट एक्सर साइज : (तेज व्यायाम) मॉर्निंग वॉक के बाद शरीर को गर्म करने के लिये, कैलोरी को बर्न करने के लिये तथा रक्त संचार तीव्र करने के लिये फास्ट एक्सरसाइज करते हैं, इसके बाद ध्यान करें।

ध्यान : जीवन में सघन हो रहे तनाव से बचने के लिये, स्मरण शक्ति बढ़ाने तथा संकल्प शक्ति को दृढ़ करने, मन को एकाग्र करने के लिये ध्यान का अभ्यास करें, ध्यान का सहारा लें।

'विश्व में ऐसा कोई हॉस्पिटल नहीं है जो अस्वस्थ्य भावों का इलाज करता हो, पर ध्यान एक ऐसा औषधालय है जहाँ विभिन्न प्रयोगों के माध्यम से अस्वस्थ्य भावों का रेचन व स्वस्थ सुंदर भावों का उद्भवन किया जाता है।'

आसन : स्थिर सुखमासनम्। जिसमें शरीर स्थिर रहे और मन को सुख की प्राप्ति हो, शरीर की उस स्थिति को आसन कहा जाता है। आसन करने से नाड़ियों की शुद्धि, स्वास्थ्य की वृद्धि एवं तन-मन की स्फूर्ति प्राप्त होती है। आसनों को हम ४ भागों में बाँट सकते हैं।

१. खड़े होकर किये जाने वाले आसन : रक्त को शुद्ध करते हैं इनसे स्नायु दुर्बलता दूर होती है रक्तचाप एनीमिया दूर होता है।

२. बैठकर किये जाने वाले आसन : मंदाग्नि दूर करते हैं, पाचक क्रिया बढ़ाते हैं। वायु विकार को दूर करते हैं। शरीर व चेतना को स्फूर्ति प्रदान करते हैं।

३. लेटकर किये जाने वाले आसन : आँखों की दुर्बलता दूर होती है। फेफड़ों की क्रिया व्यवस्थित हो जाती है तथा सवाईकल स्पोन्डलाइटिस की शिकायत कभी नहीं रहती।

४. विपरीत आसन : सर्वांगासन, शीर्षासन, वृक्षासन आदि इस श्रेणी में आते हैं, यह आसन रक्त की रुकावट को दूर करते हैं। मस्तिष्क, हृदय , गले तथा मलाशय व गुर्दे पर प्रभाव डालते हैं।

कैसा हो आहार : जैसा हमारा आहार होगा वैसा ही हमारा व्यवहार होगा और जैसा हम अन्न खायेंगे वैसा ही मन हो जायेगा और जैसा हमारा मन सोचेगा वैसा ही हमारा तन करेगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यानि पूरी की पूरी प्राकृतिक चिकित्सा ही पाचन तंत्र (डायजेस्ट सिस्टम) से संबंधित है और योग तंत्रिका तंत्र (नर्वस सिस्टम) से संबंधित है अत: भोजन का पाचन सही हो इसके लिये हम भोजन के बारे में बात करें कि भोजन कैसे व कब करना चाहिए।

भोजन शांतचित्त होकर, मौन पूर्वक, शोरगुल से रहित स्थान में करना चाहिए। तथा तेज भूख लगने पर ही करना चाहिए, प्राकृतिक चिकित्सा में आहार को ही औषधि माना गया है, परन्तु यह औषधि का कार्य कब करता है, जब हम भोजन चबा-चबाकर करें। अन्न शब्द अद् धातु से बना है जिसका अर्थ होता है खाना। सम्यक आहार लेना तथा उसे अच्छी तरह से पचाकर शरीर का हिस्सा बन लेना ही सही खाना है। यही अन्न की सार्थकता है, ज्यादा खाने तथा स्वाद के लिये खाने से अन्न हमें खा जाता है। ठूंस-ठूंस कर गरिष्ठ भोजन करने से शरीर की सारी शक्ति निचुड जाती है। जो शक्ति शरीर के समस्त अवयवों को पोषण एवं स्वास्थ्य प्रदान करती है, वहीं गरिष्ठ भोजन को पचाने में नष्ट होने लगती है। प्रत्येक अंग प्रत्यंग रुग्ण एवं कमजोर होने लगते हैं। जीवनी शक्ति नष्ट हो जाती है। शरीर बीमार हो जाता है।

सुबह उठते ही चाय (बेड टी यानि डेड टी) बिस्कुट (जिसमें विष कूट-कूट कर भरा हुआ है) कॉफी, पाव रोटी, ब्रेड, केक, पूडी, टाफी, कचौरी, रंग बिरंगी मिठाईयाँ, डिब्बा बंद आहार में प्रीजवेंटिव कलरेट एण्टी, ऑक्सीडेन्ट के रूप में अनेक जहरीले रसायन मिलाये जाते हैं जिनसे कैंसर, गठिया, आंत, यकृत, हृदय एवं फेफड़े के रोग तथा जेनेटिक्स विकृतियाँ पैदा होती हैं इसीलिए आज का लंच बीमारियों का मंच बना हुआ है। आज हम लोग थाली में बैठ कर हार जाते हैं उसी का नाम तो आहार हो गया है। पर होना तो चाहिए था इसके विपरीत सब्जी जैसा कि नाम से ही लगता है जिसको खाने से सब लोग जी जाते है यानि जीवित हो जाते हैं। आज तोरई कोई खाना पसंद नहीं करता वह कहती है तू रोई अपनी किस्मत पर, उसी से दिल तथा गुर्दे की अनेक बीमारियों का ईलाज होता है, एक टेवलेट ही बनाई गई है, तोरई।

उपवास : सप्ताह में एक दिन या पन्द्रह दिन में एक दिन उपवास अवश्य करें (अष्टमी, चतुर्दशी, एकादशी या पंचमी) गुस्सा या क्रोध करने वाले सोमवार का उपवास करें, क्योंकि चन्द्रमा शीतलता एवं सुधारस बरसा कर चित्त को शांत करता है। मंगलवार का उपवास मंगलकारी मेधा स्मृति ज्ञान एवं प्रज्ञावान बनने के लिये। बुधवार का उपवास ओज तेज एवं शक्ति के लिये। गुरुवार का उपवास समुद्र की तरह गुरु गंभीर बनने के लिए, शुक्रवार का उपवास शक्ति एवं वृद्धि के लिए, शनिवार का उपवास समस्त विघ्नों को दूर करने के लिए तथा रविवार का उपवास तमसो माँ ज्योतिर्गमय के लिये है। उपवास के दिन मौन रखें।

एक दिन उपवास के बाद दूसरे दिन गरिष्ठ भोजन, पकवान, मिठाई खाने से हानि अधिक लाभ कम होता है, इसलिए रस, सूप या दूध से उपवास तोड़ें, सामान्य आहार लें, उपवास के पहले तथा तोड़ने पर ठूंस-ठूंस कर भोजन करने का अर्थ रोग तथा मौत को निमंत्रित करना है।

उपवास में शरीर का विकार निकल जाता है पेट को अवकाश तथा विश्राम मिलता है पाचन संस्थान तथा शरीर को नया जीवन मिलता है रक्त की सफाई होती है। बुढ़ापा लाने वाले फ्रोरेडिकल्स बनना कम हो जाता है। आयु तथा आरोग्य में वृद्धि होती है। रोग होने की संभावना कम हो जाती है। उपवास संजीवनी का कार्य करता है, जो लोग साप्ताहिक उपवास नहीं कर सकते उन्हें फलाहार पर रहना चाहिये।

नोट :- स्वास्थ्य की दृष्टि से उपवास में गर्म पानी, नीबू पानी अथवा मौसमी का रस विकारों को निकालने की दृष्टि से अधिक लाभदायक माना गया है।

आज हमारे स्वास्थ्य का अक्षय स्त्रोत दूषित कचरे एवं गंदगी में दब गया है विषाक्त बिजातीय पदार्थ एवं विषैले मनोविकारों से कुचलकर सड़ रहा है, मर रहा है। स्वास्थ्य सुमन के खिलने एवं सुरक्षित होने की संभावना नष्ट हो रही है। जागें, उठें एवं एक कुशल माली की तरह प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा दूषित विकारों को हटाकर स्वास्थ्य सौरभ से स्वयं को, समाज को एवं सृष्टि को भर दें। साहस के साथ निसर्गोपचार द्वारा गंदगी की चट्टान को तोड़-फोड़ कर हटा दें। स्वास्थ्य का अक्षय शुद्ध सलिल स्त्रोत फूट कर जीवन को तृप्त कर देगा, आनंद विभोर हो आप गा उठेंगे। निसर्ग शरणं गच्छामि, योगं शरणं गच्छामि, आनंदं शरणं गच्छामि, आरोग्यं शरणं गच्छामि ....।

कार्ड पेलेस, सागर
फोन : २२६८७७

सूचना

इस वर्ष श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर से २० छात्र शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करेंगे। जिन्हें पाठशाला तथा मंदिर में प्रवचनार्थ विद्वानों की आवश्यकता हो वे पं. श्री रतनलाल जैन बैनाड़ा से संपर्क करें ।

पं. रतनलाल जैन बैनाड़ा , अधिष्ठाता
श्री दि. जैन श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर
वीरोदय नगर, सांगानेर, जयपुर पिन-३०३९०२
फोन : ०१४१-२७३०५५२, ५१७७३००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'साहित्य समीक्षा'

'मनीषी' प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन 'अभिनन्दन ग्रन्थ' पं. श्री नीरज जैन के निर्देशन में प्रधान सम्पादक डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु' एवं डॉ. जय कुमार जैन, डॉ. शीतल चन्द्र जैन, डॉ. कपूर चन्द्र जैन तथा डॉ. अनुपम जैन, श्री कपूर चन्द्र पाटनी, पं. लाल चन्द्र जैन 'राकेश' व पं. विनोद कुमार जैन के सम्पादकत्व में सम्पादित हुआ है। ग्रन्थ के प्रबन्ध सम्पादक डॉ. चिरंजी लाल विद्या-विनय-विवेक के प्रतीक प्राचार्य जी के जीवन्त व्यक्तित्व की यशोगाथा आलेखित करने में समर्थ रही है ऐसा तो नहीं कहा जा सकता क्योंकि 'वाक अनयन, नयन बिनु वाणी' अत: देखा हुआ भी नहीं कहा जा सकता तो 'मनीषा' में एक मनीषी विद्वान की यशोगाथा जीवन्त हो सके यह भी सम्भव नहीं है फिर भी ७० लोगों के आशीर्वचन, १७० लोगों की आदरांजलि यशोगाथा के रूप में काफी कुछ अभिव्यक्त कर रही है। प्रथम खण्ड में आचार्यों तथा मुनियों, त्यागियों, विद्वानों तथा विशिष्ट लोगों के मंगलाशीष, सन्देश तथा शुभ कामनायें हैं, जो एक गुणी आदर्श उदान्त चरित्रवान विद्वान का सम्मोहन तो है ही। द्वितीय खण्ड में शताधिक प्रशंसकों की आदरांजलियाँ हमारे प्रणम्य संस्मरण हैं जो अभिनन्दनीय विद्वान के प्रति उसके गौरव पूर्ण विशिष्ट गुणों की यशोगाथा हैं। तृतीय खण्ड में 'जीवन ऐसे जियो', आत्मकथ्य, भेंट वार्ताएँ, व्यक्तित्त्व एवं कृतित्त्व दिया गया है जो ग्रन्थ का प्रेरक तत्व अथवा मुख्य आकर्षक पहलू है। 'न धर्मो: धार्मिकैर्बिना' के अनुसार गुणों का साकार रूप गुणी में ही दृष्टव्य होता है, अत: पाठक इस खण्ड को पढ़कर ही इस 'ग्रन्थ सागर' के रत्न (सूत्र) हस्तगत करता है। यह कथ्य संक्षिप्त होते हुये भी सारगर्भित है। ३७ पृष्ठों पर आत्मकथ्य है तथा ९० पृष्ठों पर अन्यान्य विद्वानों के समीक्षात्मक अभिमतों को आलेखित किया है। चतुर्थ खण्ड में साहित्यक अवदान, यात्राएँ, काव्योद्यान, समीक्षाएँ प्राचार्य जी की प्रेरणास्पद तथा समीचीन है। ४ आलेख अन्य विद्वानों में उनके लिये लिखे हैं। पंचम खण्ड में बीसवीं सदी के प्रमुख दि. जैन विद्वानों का अति संक्षिप्त परिचय है, उनमें काफी कुछ छूट गये हैं। लगभग ७०० पृष्ठों के ग्रन्थ (आकार ११"×९") में काफी कुछ समन्वित करने का सफल प्रयास किया गया है। प्रत्येक पृष्ठ पर सुभाषित सूत्र आलेखित हैं जो उपयोगी व प्रेरणास्पद हैं।

मुख पृष्ठ तथा सभी खण्डों के अग्रपृष्ठों पर ऐतिहासिक स्मृति-चित्रग्रन्थ की सार्थकता स्पष्ट कर रहे हैं। ग्रन्थ के नायक मनीषी विद्वान प्राचार्य जी के जीवन वृत्त पर आधारित शताधिक छायाचित्र आकर्षण बढ़ा यशोगाथा में चार चाँद लगा रहे हैं। ग्रन्थ की आदर्श साज-सज्जा सादगी पूर्ण कलात्मक प्रस्तुति एवं त्रुटि रहित स्पष्ट मुद्रण सभी कुछ सुन्दरतम है। ग्रन्थ पठनीय, प्रेरणास्पद, संग्रहणीय एवं मानवता के लिये अनुकरणीय है। प्रकाशन श्री भारतवर्षीय दि.जैन धर्म संरक्षिणी महासभा (पश्चिम बंगाल) कोलकाता ने किया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ जैन-जैनेतर विद्या मंदिरों के पुस्तकालयों में उपयोगी होगा ताकि नवीन पीढ़ी तथा शिक्षित वर्ग ऐसे सदाचारी निस्प्रही विद्वान से प्रेरणा ले सके तथा यह भी जाने कि इस अर्थ युग में भी सुसंस्कार वान विद्वान समाज में प्रणम्य हैं। महासभा का लक्ष्य जैन धर्म के आदर्शों का प्रचार-प्रसार करना है और इस ग्रन्थ में एक आदर्श व्यक्तित्व को उसके उदात्त कृतित्त्व के लिये अभिनन्दन रूप विनयांजलि दी गयी है जो श्लाघनीय है।

प्रो.डॉ. विमला जैन
स. सम्पादिका - 'जैन महिलादर्श'

संस्मरण

सच्चा-रास्ता

मुनि श्री क्षमासागर जी

चातुर्मास में जयपुर से कुछ लोग आचार्य महाराज के दर्शन करने नैनागिरि आ रहे थे। वे रास्ता भूल गये और नैनागिरि के समीप दूसरे रास्ते पर मुड़ गये। थोड़ी दूर जाकर उन्हें अहसास हुआ कि वे भटक गये हैं। इस बीच चार बंदूकधारी लोगों ने उन्हें घेर लिया। गाड़ी में बैठे सभी यात्री घबरा गये। एक यात्री ने थोड़ा साहस करके कहा कि 'भैया, हम जयपुर से आऐ हैं। आचार्य विद्यासागर महाराज के दर्शन करने जा रहे हैं, रास्ता भटक गए हैं, आप हमारी मदद करें।' उन चारों ने एक दूसरे की ओर देखा और उनमें से एक रास्ता बताने के लिए गाड़ी में बैठ गया।

नैनागिरि के जल मंदिर के समीप पहुँचते ही वह व्यक्ति गाड़ी से उतरा और इससे पहले कि कोई कुछ पूछे, वह वहाँ से जा चुका था। जब उन यात्रियों ने सारी घटना सुनाई तो लोग दंग रह गए। सभी को वह घटना याद आ गई, जब चार डाकुओं ने आचार्य महाराज से उपदेश पाया था। उस दिन स्वयं सही राह पाकर आज इन भटके हुए यात्रियों के लिए सही रास्ता दिखाकर मानों उन डाकुओं ने उस अमृत वाणी का प्रभाव रेखांकित कर दिया।

'आत्मान्वेषी' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महासभाध्यक्ष जी के नाम खुला पत्र

मूलचंद लुहाड़िया

कुछ समय पूर्व एक लेख 'यह कैसा धर्म संरक्षण' आपको भेजा था। लेख एवं विशेषत: लेख की अंतिम पंक्तियों के माध्यम से समाज संगठन एवं धर्म संरक्षण हेतु निवेदन एवं सुझावों पर आपकी सकारात्मक प्रतिक्रिया की समाज को अपेक्षा थी किंतु केवल यही नहीं कि परिणाम निराशा जनक हैं अपितु ऐसा प्रतीत होता है कि आप एक पक्षीय मान्यताओं के हठाग्रह के कारण किसी की कुछ भी सुनने के लिए तैयार नहीं हैं।

आपका एक पत्र दिनांक ९.५.२००३ को मुझे पहले मिला था। मेरा उसका उत्तर देने की इच्छा नहीं थी। किंतु अभी १९ फरवरी के जैन गजट में प्रकाशित महासभा की प्रबंधकारिणी समिति की कलकत्ता बैठक के प्रस्ताव सं. ५ को पढ़कर मुझे बहुत पीड़ा हुई और मैं उस पत्र और प्रस्ताव पर लिखने के भावों को रोक नहीं पाया। मेरी और आपकी बात सब की जानकारी में आ सके अस्तु यह खुला पत्र ....।

आपने अपने उक्त पत्र में दो बातें लिखी हैं। एक तो यह कि आपकी भट्टारकों के बारे में हमारी राय शुरु से पसंद नहीं थी और आज भी नहीं है। हमारी राय आपको पसंद नहीं है इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है। किंतु मुझे दु:ख तो इस बात का है कि आपको इस बारे में न जिनागम की बात पसंद है और न दि. जैन आचार्यों की। भट्टारकों की उत्पत्ति का इतिहास सर्वविदित है। बारहवीं शताब्दी में दिगम्बर मुनि परिस्थितिवश बाहर आते जाते समय अधो वस्त्र का प्रयोग करने लगे और धीरे-धीरे पूरे वस्त्र पूरे समय के लिए धारण करने लगे। आगे जाकर परिग्रहसंग्रह में लिप्त होकर मठाधीश बन गए और विलासी जीवन जीने लगे। वे श्रावकोचित संयम भी विधिवत धारण नहीं करते थे किंतु फिर भी पीछी रखते हुए स्वयं का मुनिवत पूजा सत्कार कराते थे। ऐसे ही मुनिपद से भ्रष्ट परिग्रह धारी मठाधीशों के लिए भट्टारक शब्द रूढ हो गया। दिगम्बर जैन धर्म के मुनियों या श्रावकों के आचार ग्रंथों में भट्टारकों का कोई स्थान नहीं है। इनकी चर्या जैन आचार संहिता से विपरीत है। दिगम्बर धर्म के उन्नायक आचार्य कुंदकुंद ने स्पष्ट घोषणा की कि दिगम्बर मुनि उत्कृष्ट श्रावक एवं आर्यिका के अतिरिक्त जैन दर्शन में कोई चौथा लिंग नहीं है। दिगम्बर जैन समाज के मध्यकालीन इतिहास में भट्टारकों के आतंक और अत्याचारों का वर्णन भरा पड़ा है। उत्तर भारत में जिनागम के स्वाध्यायी श्रावकों एवं विद्वानों के प्रभाव से भट्टारक प्रथा लगभग समाप्त हो गई। दक्षिण में अभी भट्टारकों द्वारा उनका आतंक पूर्वक शोषण तो रूका है। दीक्षा के समय थोड़ी देर के लिए मुनि बनकर श्रावकों की प्रार्थना पर कि इसकाल में निर्वस्त्र मुनि अवस्था व्यवहार्य नहीं है अत: आप वस्त्र धारण कर लेवें, वे वस्त्र धारण कर परिग्रह से लिप्त हो जाते हैं, तथापि अपनी पूजा सत्कार मुनियों के समान ही कराते हैं। यह भेष दिगम्बर मुनि अवस्था का विकृत रूप है। वस्त्र एवं अन्य परिग्रह को रखते हुए भी पीछी धारण कर वे पीछी का घोर अवर्णवाद कर रहे हैं। आचार्य शांति सागर जी महाराज तो भट्टारकों को व्रती श्रावक के रूप में भी मान्य नहीं करते थे। जैन आचार शास्त्र के अनुसार भट्टारक प्रतिमाधारी व्रती नहीं होने से श्रावक भी नहीं कहे जा सकते। भट्टारकों के बारे में हमारा तो केवल यह कहना है कि आगम के अनुसार इनका स्वरूप निर्धारण किया जाना चाहिए। हमारी इस बात का विरोध करते हुए आपने पू. आचार्यों एवं दि. जैन आगम के विरुद्ध भट्टारकों के पक्ष में अपने हठाग्रह के प्रचार का अभियान चला रखा है।

आश्चर्य तो तब होता है जब आप धर्म संरक्षणी महासभा के मंच का उपयोग अपनी आगम विरुद्ध धर्म विरुद्ध मान्यता के पक्ष में प्रस्ताव पारित कराकर महासभा को विवादास्पद बनाने की ओर बढ़ा रहे हैं। यह सच है कि महासभा के इतिहास में आप ऐसे पहले अध्यक्ष हैं जिन्होंने पूर्ण समर्पण भाव से सर्वाधिक समय देकर महासभा को आगे बढ़ाया है। परंतु साथ ही यह भी उतना ही सच है कि महासभा के इतिहास में आप ही ऐसे पहले अध्यक्ष हैं जो महासभा के साधनों का अपनी एक पक्षीय मान्यताओं के प्रचार में सर्वाधिक उपयोग करते हुए महासभा को एक पक्षीय बनाते जा रहे हैं।

अभी महासभा की कलकत्ता में हुई प्रबंधकारिणी समिति की बैठक में प्रस्ताव सं. ५ के द्वारा प.पू. आचार्य विद्यासागर जी महाराज के आगमानुकूल उपदेश/आदेश की उपेक्षा करते हुए समिति ने जो पूर्व में प्रबंध समिति की लखनऊ में हुई बैठक में प्रस्ताव सं. २ भट्टारकों की प्रशंसा/समर्थन में पारित किया था, उसका पुन: अनुमोदन किया है। पूर्व प्रस्ताव में सम्मान्य प्रामाणिक विद्वान स्व. नाथूराम जी प्रेमी द्वारा लिखित एवं दक्षिण भारत की लोकप्रिय प्रतिनिधि संस्था, दक्षिण भारत जैन महासभा द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'भट्टारक' की निंदा करने का भी अशोभनीय कार्य किया है।

प्रबंध समिति के वर्तमान प्रस्ताव में पू. आचार्य श्री के निर्देश को न मानने के पक्ष में मुख्य तर्क देते हुए कहा गया है 'भट्टारक परंपरा सैंकड़ों वर्षों से चली आ रही है और उसमें मूलभूत परिवर्तन करना समाज की एकता के लिए व प्राचीन संस्कृति के लिए हितकर नहीं होगा।' उक्त तर्क को पढ़कर हंसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी आती है और दु:ख भी होता है। क्या सैकड़ों वर्षों से चली आ रही मिथ्या परंपरा को केवल प्राचीन होने के कारण न बदलना समाज के लिए हितकर होता है? मिथ्यात्व की परंपरा और सम्यक्त्व की परंपरा दोनों नाना जीवों की अपेक्षा अनादि कालीन है। एक जीव की अपेक्षा मिथ्यात्व की परंपरा अनादि कालीन प्राचीन होती है और सम्यक्त्व की परंपरा सदैव आदि कालीन अर्वाचीन ही होती है।

भगवान आदिनाथ की दीक्षा के समय दीक्षित हुए सभी साधु कुछ समय बाद भ्रष्ट हो गए थे और वे सब हजारों वर्षों तक भ्रष्ट साधु के रूप में रहे। पुन: भगवान को केवल ज्ञान प्राप्त होने के पश्चात समीचीन साधु चर्या का उपदेश प्राप्त कर अपने मिथ्या भेष और मिथ्या आचरण का त्याग कर मारीच को छोड़कर सभी भेषी साधु पुन: दीक्षित होकर सच्चे साधु बनकर रत्नत्रय की आराधना करने लगे। (आदि पुराण श्लोक १८२)

इसीप्रकार भगवान महावीर के निर्वाण प्राप्ति के पश्चात् भद्रबाहु श्रुत केवली के काल में जैन साधु वस्त्र धारण करने लगे और उन्होंने श्वेताम्बर सम्प्रदाय की नींव डाली। अपनी मान्यताओं के पक्ष में आगम साहित्य सृजन कर उन्होंने श्वेताम्बर सम्प्रदाय को एक सबल सम्प्रदाय के रूप में विकसित किया। क्या सैकड़ों वर्ष प्राचीन और जैन नाम वाले का आगम साहित्य से समर्थित होने के कारण हम उसको समीचीन स्वीकार करेंगे और समाज की एकता भंग होने के तथाकथित भय के आधार पर उन मान्यताओं का आगम और तर्क से खंडन नहीं करेंगे? आगे चलकर दिगम्बर साधुओं में भी शिथिलाचार का प्रवेश सैकड़ों वर्ष पहले हो गया था। आचार्य कुंदकुंद ने अपने साहित्य में ऐसे शिथिलाचारी भ्रष्ट साधुओं को खूब आड़े हाथों लिया है। उनकी वंदना आदि करनेका विरोध किया है। आचार्य देवसेन ने दिगम्बर जैनाभासों का कथन किया है। अनेक दिगम्बर जैनाचार्यों ने पार्श्वस्थ आदि शिथिलाचारी साधुओं की निंदा की है। अभी महासभा के मुख-पत्र जैन गजट में साधुओं के शिथिलाचार के विरुद्ध पर्याप्त पुष्ट आगम प्रमाणों से समर्थित सम्पादकीय लेख प्रकाशित हुए हैं इसी प्रबंध समिति की बैठक के साथ-साथ ही कलकत्ते में ही महासभा का जो साधारण अधिवेशन हुआ उसके पारित प्रस्ताव सं. २ में आपने साधुओं से जिनाज्ञा पालन एक लौकिक विषय एवं मंत्रतंत्रादि में अनुरक्त न होने की अपेक्षा की है। यदि केवल प्राचीन परंपरा होने के कारण ही मिथ्या परंपराएँ समीचीन बन जाती हो और उनका विरोध समाज के लिए हितकर न होता हो तो क्यों आप सैकड़ों वर्षों की साधुओं के शिथिलाचार एवं आचरण भ्रष्टता की पुरानी परंपरा को धर्म और समाज के लिए अहितकर मानते हुए उसका विरोध कर रहे हैं? यदि निष्पक्ष होकर सोचें तो शिथिलाचारी साधुओं से भी भट्टारक परंपरा समाज के लिए अधिक अहितकर है। भट्टारक तो वस्त्र परिग्रह एवं विषयों में आकंठ डूबे होते हुए भी पीछी रखते हुए अपने को मुनि के समान पुजवाते हैं। सही स्थिति यह है कि शिथिलाचारी साधुओं की परंपरा भट्टारकों की परंपरा से अनेकों वर्ष पुरानी है। एक ओर आप भट्टारकों की परंपरा का केवल सैकड़ों वर्ष पुरानी होने के आधार पर समर्थन कर रहे हैं और दूसरी ओर शिथिलाचारी साधुओं की परंपरा का विरोध कर रहे हैं। यह विरोधाभास क्यों? समाज की एकता की रक्षा के आधार पर भी भट्टारकों, मंत्र-तंत्रवादी साधुओं के पक्ष में भी बहुत लोग हैं। यदि अपने मौलिक सिद्धांतों की हत्या के मूल्य पर आप सामाजिक एकता चाहते हैं तो आपको श्वेताम्बरों का भी समर्थन करना चाहिए। उनका नहीं तो कम से कम दिगम्बर कहलाने वाले सोनगढ़ पंथियों एवं शिथिलाचारी साधुओं का तो समर्थन कर समाज में एकता स्थापित करने की ओर अग्रसर होना चाहिए जो आपको भी ईष्ट नहीं है। वस्तुत: सिद्धान्तों का संरक्षण सर्वोपरि है।

आपके वैचारिक विरोधाभास एवं पक्ष व्यामोह का यह मुंह बोलता उदाहरण यह है कि एक ओर आप कानजी पंथियों का विरोध करते हुए कानजी को सद्गुरु के रूप में पूज्य मानने को मिथ्यात्व घोषित करते हैं और दूसरी ओर उनसे अधिक आरंभ परिग्रह भोगादि में लिप्त पीछीधारी भट्टारकों के सर्वथा आगम विरुद्ध स्वरूप को महासभा के मंच से मान्यता प्रदान करते और उसको पुन: पुन: पुष्ट करते तनिक भी संकोच नहीं करते हैं। अपने को आचार्य शांतिसागर जी महाराज के उपासक धर्म संरक्षक मुनि भक्त बताने वाले आपने और आपके साथियों ने आज के युग में आचार्य शांतिसागर महाराज के मिशन के प्रायोगिक उन्नायक निर्दोष मुनिचर्या को जीकर स्थापित करने वाले दिगम्बर जैन धर्म के सातिशय प्रभावक आचार्य विद्यासागर जी महाराज के द्वारा दिगम्बर जैन आचार पक्ष में आई विकृति को दूर करने की दिशा में प्रदान किए गए आगमानुकूल निर्देश को केवल ठुकराया ही नहीं अपितु उसके विरुद्ध उस मिथ्यात्व को पुनर्पुष्ट करने का अक्षम्य अपराध किया है। श्रीमान जी! भट्टारकीय परंपरा प्राचीन दि. जैन संस्कृति नहीं है यह तो दि. जैन संस्कृति में शिथिलाचारी परिग्रह लिप्सु भोगासक्त साधुओं द्वारा लाई गई चिंतनीय विकृति है। ऐसी विकृत परपंरा का बार-बार महासभा के मंच से समर्थन कर आपने महासभा के धर्म संरक्षण के पवित्र उद्देश्य को निष्ठुरता पूर्वक भंग किया है।

दिगम्बर साधुचर्या और दिगम्बर मुद्रा तो दिगम्बर जैन धर्म के प्राण हैं। विदेशों की यात्रा पर जाने वाले भट्टारकों को देखकर अनेक विदेशी लोग यह समझ बैठे हैं कि श्वेताम्बर जैन साधु सफेद वस्त्र पहनने वाले होते हैं और दिगम्बर जैन साधु गेरुआं वस्त्र पहनने वाले होते हैं।

इन दिगम्बर साधु के दोषयुक्त विकृत रूप भट्टारक संस्था का समय-समय पर सभी आगमज्ञ विद्वानों ने विरोध किया है, जिसके फलस्वरूप उत्तर भारत में तो इस संस्था का नाम मात्र शेष रह गया। दक्षिण भारत में भी दक्षिण भारत दि. जैन सभा जैसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिगम्बर जैनों की प्रतिनिधि संस्था ने भट्टारक संस्था का विरोध किया है। फिर भी श्रावकों में स्वाध्याय के अभाव के कारण दि. जैन साधु के समीचीन स्वरूप की जानकारी नहीं होने से भट्टारकों की मान्यता पाई जाती है। उन अवशिष्ट भट्टारकों के आगमानुसार स्वरूप निर्धारण की आज महती आवश्यकता है।

भट्टारक संस्था के बारे में प.पू. आचार्य वर्द्धमान सागर जी से मेरी अनेक बार चर्चा हुई है। उनका यह कहना है कि वर्तमान भट्टारकों से मिलकर उनके चरणानुयोग आगम के अनुकूल स्वरूप निर्धारण का प्रयास करना चाहिए। वस्त्रादि परिग्रह सहित रहने पर उनको पीछी नहीं रखने के लिए कहा जाना चाहिए। उन्हीं के निर्देशन पर मैं भट्टारक चारूकीर्तिजी से चर्चा करने श्रवणबेलगोल गया था। मैंने पाया कि वे आगमभीरू हैं और सद्भावना पूर्वक स्वरूप निर्धारण के सम्बन्ध में आयोजित चर्चा में भाग लेने से परहेज नहीं करेंगे।

आपने प.पू. आचार्य शांतिसागर जी और आचार्य विद्यासागर जी की बात तो नहीं मानी। क्या आप आचार्य वर्द्धमान सागर जी की बात मानने के लिए तैयार हैं ? यदि हाँ तो एक बार आचार्य श्री के सान्निध्य में खुली चर्चा आयोजित कर इस विवाद का सकारात्मक एवं सर्वमान्य हल प्राप्त करने में पहल कीजिए।

दिगम्बर जैन धर्म के संरक्षण का पवित्र उत्तरदायित्व आपके कंधों पर है। दिगम्बर जैन धर्म का अस्तित्त्व सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के अस्तित्त्व पर आधारित है। आपसे पुन:पुन: निवेदन है कि आप दि. जैन धर्म पर कृपा कीजिए और इसके संरक्षण के लिए जिनवाणी की एवं प.पू. आचार्यों की बात मानिए, मनमानी मत करिए।

दूसरी बात आपने पत्र में लिखी है कि हम तेरहपंथ के समर्थक हैं और हमको बीस पंथ वालों का दिल ज्यादा नहीं दुखाना चाहिए। मुझे अत्यधिक आश्चर्य मिश्रित दुख है कि आपके स्वयं के द्वारा किए जा रहे इस पंथ भेद के विषैले प्रचार का दोष आप हमारे ऊपर डालना चाह रहे हैं। हमने कहीं कभी तेरह पंथ, बीस पंथ और उसके पक्ष-विपक्ष की चर्चा नहीं की।

कृपा करके पंथ भेद के आधार पर समाज में विघटन की खाई को और चौड़ा करने के बजाय उसको पाटने का सद्प्रयास कीजिए। पूर्व में तेरह पंथ और बीस पंथ में सामान्यत: पूजा पद्धति मात्र का अंतर था। किंतु आज तो हम लोगों ने बीस पंथ को दिगम्बर जैन धर्म के मूल सिद्धांतों की उपेक्षा करते हुए इसे ब्राह्मण पंथ बना दिया है। मध्यकाल में कतिपय जैन अथवा ब्राह्मण भट्टारकों ने जैन धर्म में जिस विशेष विकृति का प्रवेश करा दिया था, आज उसके समर्थन में और उसके प्रचार में पूरी शक्ति लगाई जा रही है।

भट्टारक बने रहें परंतु वस्त्रधारण करते हुए व्रती श्रावक के रूप में अपना आगम के अनुसार पद निर्धारित करने, धर्म साधना करते हुए जैन धर्म की प्रभावना करें। ऐसा करके हम दिगम्बर जैन धर्म की मुनि और श्रावक की आचरण संस्कृति की सुरक्षा करते हुए सामाजिक एकता भी स्थापित कर पायेंगे।

मुझे विश्वास है कि हमारे आराध्य देव-शास्त्र-गुरु का अवमूल्यन दिगम्बर जैन समाज में हुआ जा रहा है। उसको आप भी अवश्य दिगम्बर जैन धर्म के लिए एक संकट का चिन्ह मान रहे हैं। अब वीतराग देव की आराधना के स्थान पर सरागी देवी देवता हमारी पूजा आराधना के केन्द्र बनते जा रहे हैं। अपनी लौकिक ऐषणाओं की पूर्ति का आश्वासन देने वाले मंत्र-तंत्र वादी एवं शिथिलाचारी साधुओं की ओर हम अधिक आकृष्ट होते जा रहे हैं। इसी प्रकार वैराग्य पोषक आध्यात्मिक ग्रंथों के स्वाध्याय के स्थान पर सरागी देवी देवताओं की पूजा, गुणगान तथा मंत्र-तंत्र की पुस्तकें हमें रुचिकर लगने लगी हैं।

वीतराग जैन धर्म के लोक कल्याणकारी आध्यात्मिक रुप को संरक्षित और जीवित रखने के लिए हमें इन आत्मघाती प्रवृतियों को अनुत्साहित करना होगा।

आशा है आप इस महान उद्देश्य वाली महान संस्था महा सभा के द्वारा इस अनेकांतात्मक युक्तियुक्त जैन धर्म और उसके वैज्ञानिक प्रायोगिक पक्ष के संरक्षण हेतु समाज में एकता एवं विचार साम्य का वातावरण निर्माण करने का प्रभावकारी प्रयास कर महासभा के धर्म संरक्षणी नाम को सार्थक सिद्ध करेंगे।

मदनगंज, किशनगढ़

भजन

बाजे कुण्डलपुरमें बधाई कि नगरी में
वीर जनमे महावीर जी
जागे भाग्य हैं, त्रिशला माँ के
कि त्रिभुवन के नाथ जन्मे महावीरजी
शुभ घड़ी जनम की आयी, कि स्वर्ग से देव आये
महावीर जी ...... बाजे कुण्डलपुरमें
तेरा न्हवन करें मेरुपर, कि इन्द्र जलभर लाये
महावीर जी ..... बाजे कुण्डलपुरमें
तेरे पालने में हीरे मोती, कि डोरीयोमें लाल लटके
महावीर जी ..... बाजे कुण्डलपुरमें
तुम्हें देवीयाँ झुलावें झूला, कि मन में मगन होके
महावीर जी ..... बाजे कुण्डलपुरमें
अब ज्योति है तेरी जागी, कि सूरज चाँद छिप जायेंगे
महावीर जी ..... बाजे कुण्डलपुरमें
तेरे पिता लुटायें मोहरे, कि खजाने सारे खुल जायेंगे
महावीर जी ..... बाजे कुण्डलपुरमें
हम दरश को तेरे आये, कि पाप सारे धूल जायेंगे
महावीर जी ..... बाजे कुण्डलपुरमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतन लाल बैनाड़ा

प्रश्नकर्ता - श्री सरिता जैन, नन्दुरवार

जिज्ञासा - लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य सैनी है या असैनी ?

समाधान - नारकी, देव एवं मनुष्य असैनी होते ही नहीं हैं, देव व नारकी, निवृत्य पर्याप्त अवस्था में तथा मनुष्य लब्धि अपर्याप्त तथा निवृत्य पर्याप्त अवस्था में सैनी ही होते हैं। जो असैनी होते हैं उनके पाँच तक पर्याप्ति होती हैं तथा सैनी के ६ पर्याप्ति होती हैं। जो लब्धि अपर्याप्त मनुष्य हैं उनके ६ अपर्याप्ति होती हैं अर्थात् अपर्याप्त दशा में छहों पर्याप्तियाँ प्रारंभ तो होती हैं परन्तु पूर्ण एक भी नहीं होती। उनको नो इन्द्रियावरण कर्म का क्षयोपशम अवश्य होता है परन्तु पर्याप्ति पूर्ण न होने से द्रव्य मन एवं भाव मन नहीं पाया जाता। तथापि वे नो इन्द्रियावरण कर्म का क्षयोपशम होने से सैनी ही कहे जाते हैं।

जिज्ञासा - विग्रहगति के प्रथम समय से ही जन्म माना जाये या योनि स्थान प्राप्त होने पर ?

समाधान - उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में श्री राजवार्तिक अध्याय २, सूत्र ३४ की टीका में इस प्रकार कहा है, 'मनुष्यस्तैर्यग्योनो वा छिन्नायु: कार्मणकाययोगस्थो देवादिगत्युदयाद् देवा दिव्यपदेशभागिति कृत्वा तदेवास्य जन्मेति मतमिति:, तन्न: किं कारणम्। शरीर निर्वर्तकपुद्गलाभावत्। देवादिशरीर निवृत्तौ हि देवादिजन्मेष्टम्।'

प्रश्न - मनुष्य व तिर्यंचायु के छिन्न हो जाने पर कार्मणकाययोग में स्थित अर्थात् विग्रहगति में स्थित जीव को देवगति का उदय हो जाता है, और इस कारण उसको देवसंज्ञा भी प्राप्त हो जाती है। इसलिए उस अवस्था में ही उसका जन्म मान लेना चाहिए ?

उत्तर - ऐसा नहीं है, क्योंकि शरीर योग्य पुद्गलों का ग्रहण न होने से उस समय जन्म नहीं माना जाता। देवादिकों को शरीर की निष्पत्ति को ही जन्म संज्ञा प्राप्त है।

उपरोक्त प्रमाण के अनुसार विग्रहगति के प्रथम समय से ही जीव को नवीन गति का जीव तो माना जाता है परन्तु जब वह योनि स्थान पर पहुँचकर, शरीर के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण करने लगता है तब ही उसका जन्म मानना आगम सम्मत है।

प्रश्नकर्ता - ब्र. सोमदेव जी।

जिज्ञासा - श्री षट्खण्डागम तथा उनकी श्री धवलादि टीकाओं को करणानुयोग का ग्रन्थ मानना चाहिए या द्रव्यानुयोग का ?

समाधान - आगम का चार अनुयोगों में विभाजन सर्वप्रथम आ. समन्तभद्र स्वामी ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार में किया है। उनके अनुसार करणानुयोग का स्वरूप इस प्रकार कहा गया है,

'लोकालोकविभक्तेर्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च।
आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ॥४४॥'

अर्थ- लोक अलोक के विभाग को, युगों के परिवर्तन को तथा चारों गतियों को दर्पण के समान प्रगट करने वाले करणानुयोग को सम्यग्ज्ञान जानता है।

श्री जयधवला के टीकाकार आ. जिनसेन ने आदिपुराण २/९९ में इसप्रकार कहा है,

'द्वितीय: करणादि: स्यादनुयोग: स यत्र वै।
त्रैलोक्यक्षेत्र संख्यानं कुलपत्रेऽधिरोपितम ॥९९॥'

अर्थ - दूसरे महाधिकार का नाम करणानुयोग है। इसमें तीनों लोकों का वर्णन उस प्रकार लिखा होता है जिसप्रकार किसी ताम्रपत्र पर किसी की वंशावली लिखी होती है॥ ९९॥

अनगार धर्मामृत में करणानुयोग का स्वरूप इस प्रकार कहा है-

चतुर्गतियुगावर्तलोकालोकविभागवित्।
हृदि प्रणेय: करणानुयोग: करणातिगै ॥१०॥

अर्थ - नारक, तिर्यंच, मनुष्य, देवरूप चार गतियों, युग अर्थात् सुषमा-सुषमा आदि काल के विभागों का परिवर्तन तथा लोक और अलोक का विभाग जिसमें वर्णित है उसे करणानुयोग कहते हैं। जितेन्द्रिय पुरुषों को इस करणानुयोग को हृदय में धारण करना चाहिए॥ १०॥

इसकी स्वोपज्ञ टीका में पं. आशाधर जी ने उदाहरण रूप लोकायिनी, लोक विभाग, पंचसंग्रह आदि ग्रंथों का नाम दिया है।

श्री वृहद्द्रव्य संग्रह में गाथा ४२ की टीका में इसप्रकार कहा है, 'त्रिलोकसारे जिनान्तरलोक विभागादि ग्रन्थव्याख्यानं करणानुयोगो विज्ञेय:।'

त्रिलोकसार में तीर्थंकरों का अन्तराल और लोकविभाग आदि व्याख्यान है। ऐसे ग्रन्थ रूप करणानुयोग जानना चाहिए।

उपरोक्त सभी प्रमाणों के अनुसार तिल्लोयपण्णत्ति, त्रिलोकसार, लोक विभाग, जम्बूदीपपण्णत्ति आदि ग्रंथ निश्चित रूप से करणानुयोग के ग्रन्थ हैं।

अब विभिन्न आचार्यों द्वारा कही गई द्रव्यानुयोग की परिभाषाओं पर विचार करते हैं।

श्री रत्नकरण्डश्रावकाचार में द्रव्यानुयोग का स्वरूप इस प्रकार कहा है-

जीवाजीवसुतत्त्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च।
द्रव्यानुयोगदीप: श्रुतविद्यालोकमातनुते॥४६॥

अर्थ- द्रव्यानुयोग रूपी दीपक जीव-अजीव रूप सुतत्त्वों को, पुण्य-पाप और बन्ध-मोक्ष को तथा भावश्रुतरूपी प्रकाश को विस्तारता है।

आदिपुराण में जयधवला के रचियता आ. जिनसेन महाराज ने इस प्रकार कहा है-

तुर्यो द्रव्यानुयोगस्तु द्रव्याणां यत्र निर्णय:
प्रमाणनयनिक्षेपै: सदाद्येश्च किमादिभि: ॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ- चौथा महाधिकार द्रव्यानुयोग है, इसमें प्रमाण, नय, निक्षेप तथा सत्संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, अल्पबहुत्व, निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान आदि के द्वारा द्रव्यों का निर्णय किया जाता है। (टीका पं. पन्नालाल जी)

पं. आशाधर जी ने अनगार धर्मामृत में इसप्रकार लिखा है-

जीवाजीवौ बन्धमोक्षौ पुण्यपापे च वेदितुम।
द्रव्यानुयोगसमयं समयन्तु महाधियः ॥१२॥

अर्थ- जीव-अजीव, बन्ध-मोक्ष और पुण्य-पाप को जानने के लिए तीक्ष्ण बुद्धि शाली पुरुषों को द्रव्यानुयोग विषयक शास्त्रों को सम्यक् रीति से जानना चाहिए॥ १२ ॥ इसकी स्वोपज्ञ टीका में पं. आशाधर जी के उदाहरण स्वरूप सिद्धांतसूत्र एवं तत्वार्थसूत्रादिक लिखा है।

वृहद्द्रव्य संग्रह ४२ की टीका में इस प्रकार कहा है- प्राभृततत्वार्थ सिद्धान्तादौ यत्र शुद्धाशुद्ध जीवादिषड्द्रव्यादीनां मुख्यवृत्या व्याख्यानं क्रियते स द्रव्यानुयोगो भण्यते।

अर्थ- समयसार आदि प्राभृत और तत्वार्थसूत्र तथा सिद्धान्त आदि शास्त्रों में मुख्यता से शुद्ध-अशुद्ध जीव आदि छः द्रव्य आदि का जो वर्णन किया गया है वह द्रव्यानुयोग कहलाता है।

उपरोक्त परिभाषाओं के अनुसार श्री षट्खण्डागम तथा उसकी श्री धवलादि टीकाएँ द्रव्यानुयोग के ग्रन्थ हैं। आचार्य जिनसेन ने तो श्री षटखण्डागम के विषय को स्पष्ट रूप से द्रव्यानुयोग स्वीकार किया है। तथा पं. आशाधर जी एवं वृहद्द्रव्यसंग्रहकार ने भी उदाहरण स्वरूप सिद्धांत सूत्रों को द्रव्यानुयोग में माना है, जिससे ये सिद्धान्तग्रंथ द्रव्यानुयोग के अन्तर्गत आते हैं। पूज्य आ. विद्यासागर जी महाराज भी इन सिद्धान्त ग्रंथों को द्रव्यानुयोग ही स्वीकार करते हैं।

यद्यपि उपरोक्त परिभाषाओं के अनुसार श्री षट्खण्डागम का वर्णित विषय करणानुयोग की परिभाषा के अन्तर्गत आता हुआ प्रतीत नहीं होता, फिर भी शायद उनमें वर्णित गणित के विषय को देखकर पं. टोडरमल जी, क्षुल्लक जिनेन्द्रवर्णी तथा पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य, सागर ने श्री षटखण्डागम, जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड आदि को करणानुयोग के अन्तर्गत स्वीकार किया है। आशा है विद्वतगण इस संबंध में और विचार करेंगे।

प्रश्नकर्ता - श्री अक्षय डांगरा, बांसवाड़ा

जिज्ञासा - गोचरीवृत्ति से आहार करना किसे कहते हैं?

समाधान - श्री अकलंक स्वामी ने राजवार्तिक अध्याय ९/६ की टीका में इस प्रकार कहा है, 'यथा सलीलसालंकारवर युवतिभिरूपनीय मानघासो गौर्नतदङ्गगतसौन्दर्यनिरीक्षणपरः तृणमेवात्ति, यथा तृणोलूपं नानादेशस्थं यथा लाभमभ्यवहरति न योजना संपदमवेक्षते तथा भिक्षुरपि भिक्षापरिवेषजनमृदुललितरूप वेषविलासावलोकन निरुत्सुकः शुष्कद्रवाहारयोजनाविशेषं चानवेक्षमाणः यथागतमनाति इति गौरिव चारो गोचार इति व्यपदिश्यते, तथा गवेषणेति च।'

अर्थ - जैसे गाय, गहनों से सजी हुई सुन्दर युवती के द्वारा लायी गयी घास को खाते समय, घास को ही देखती है, लानेवाली के अंग सौंदर्य आदि को नहीं, अथवा अनेक जगह यथालाभ उपलब्ध होने वाले चारे के पूरे को ही खाती है। उसकी सजावट आदि को नहीं देखती, उसी तरह भिक्षु भी परोसने वाले के मृदु ललित रूप वेष और उस स्थान की सजावट आदि को देखने की उत्सुकता नहीं रखता और न 'आहार सूखा है या गीला, या कैसे चाँदी आदि के बरतनों में रखा है या कैसी उसकी योजना की गयी है, आदि की ओर भी उसकी दृष्टि नहीं रहती है। वह तो जैसा भी आहार प्राप्त होता है वैसा खाता है। अतः भिक्षा को गौ की तरह चार-गोचर या गवेषण कहते हैं। इस प्रकार से आहार ग्रहण करना गोचरी वृत्ति कहलाती है।'

प्रश्नकर्ता - श्री सुशीलकुमार जैन, दिल्ली

जिज्ञासा - किस सम्यक्त्व से कौन सा सम्यक्त्व हो सकता है और कौन सा नहीं?

समाधान - १. प्रथमोपशम सम्यक्त्व से क्षायोपशमिक सम्यक्त्व हो सकता है, क्षायिक या द्वितीयोपशम नहीं।

२. द्वितीयोपशम सम्यक्त्व से क्षायोपशमिक सम्यक्त्व हो सकता है, प्रथमोपशम या क्षायिक नहीं।

३. क्षायोपशमिक सम्यक्त्व से क्षायिक सम्यक्त्व एवं द्वितीयोपशम सम्यक्त्व हो सकते हैं प्रथमोपशम नहीं।

४. क्षायिक सम्यक्त्व के बाद अन्य किसी की आवश्यकता नहीं रहती, अतः अन्य कोई सम्यक्त्व नहीं होता।

प्रश्नकर्ता - श्री नवीन कुमार जैन, सागर।

जिज्ञासा - क्या मद्यांग जाति के कल्पवृक्ष शराब देते हैं?

समाधान - मद्यांग जाति के कल्पवृक्ष शराब नहीं देते। शराब तो अभक्ष्य है। कल्पवृक्षों से अभक्ष्य वस्तुएँ प्राप्त नहीं होती। श्री आदिपुराण के नवम पर्व में इस प्रकार कहा है,

'मद्याङ्गमधुमैरेयसीध्वरिष्टासवादिकान्।
रसभेदास्ततामोदान्वितरन्त्यमृतोपमान्॥३७॥'
कामोद्दीपन साधर्म्यात मद्यमित्युपचर्यते।
ताखो रसभेदोऽयं यः सेव्यो भोगभूमिजैः॥३८॥
भदस्य करणं मद्यं पानशौण्डैर्यदादृतम्।
तद्वर्जनीयमार्याणामन्तः करण मोहदम्॥ ३९॥

अर्थ - इनमें मद्यांगजाति के वृक्ष फैलती हुई सुगन्धि से युक्त तथा अमृत के समान् मीठे मधु-मैरैय, सीधु, अरिष्ट और आसव आदि अनेक प्रकार के रस देते हैं॥ ३७॥

कामोद्दीपन की समानता होने से शीघ्र ही इन मधु आदि को उपचार से मद्य कहते हैं। वास्तव में ये वृक्षों के एक प्रकार के रस है जिन्हें भोगभूमि में उत्पन्न होने वाले आर्यपुरुष सेवन करते हैं॥ ३८॥

मद्यपायी लोग जिस मद्य का पान करते हैं वह नशा करने वाला है और अन्तः करण को मोहित करने वाला है, इसलिए आर्य पुरुषों के लिए सर्वथा त्याज्य है ॥ ३९॥

इस प्रकरण से स्पष्ट होता है कि मद्यांग जाति के कल्पवृक्ष, शराब नहीं देते, उत्तेजक पदार्थ प्रदान करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only. www.jainelibrary.org

पशुपक्षी-बलि-प्रतिषेध अधिनियम हेतु अनुरोध

देश के अनेक प्रान्तों में 'पशु-पक्षी-बलि प्रतिषेध' विषयक अधिनियम नहीं होने से अनेकश: स्थानों पर पशु-पक्षियों की बलि चढ़ाए जाने के समाचार पढ़ने-सुनने में आते रहते हैं। म.प्र. की विधानसभा से पूर्व में एतद् विषयक अधिनियम पारित भी हो चुका है। किन्तु किन्हीं कारणों से वह अभी तक राजपत्र में प्रकाशित नहीं हो पाया है। पाठकों से अपेक्षा है कि वे अपने नगर के अहिंसक, शाकाहार, जीवदया, प्राणीमैत्री में आस्था रखने वाले जैन एवं जैनेतर व्यक्तियों तथा संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित करें एवं निम्नलिखित मैटर को अपनी-अपनी संस्थाओं के नाम से मध्यप्रदेश की मुख्यमंत्री सुश्री उमाभारती, भोपाल केनाम से प्रेषित करें। इसी के साथ ज्ञापन में उल्लिखित प्रान्तों को छोड़कर उत्तरप्रदेश, उत्तरांचल, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, उड़ीसा, बिहार, झारखण्ड, हरियाणा आदि प्रान्तों के मुख्यमंत्रियों को भी इस मैटर में से बीच का एक पैराग्राफ हटाकर प्रेषित करके जीवदया के कार्य में अपना योगदान दे सकते हैं।

सम्पादक

विषय : प्रदेश में पशु एवं पक्षियों की बलि-प्रथा रोकने हेतु अधिनियम बनाए जाने के सम्बन्ध में।

१. हम आपका ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहते हैं कि प्रदेश में अनेक जगहों पर धार्मिक उपासना स्थलों की पवित्रता को पशु या पक्षियों की बलि चढ़ाकर धर्म के नाम पर व्यक्तिगत स्वार्थ, भोग-लिप्सा के बहाने नष्ट किया जा रहा है।

२. सभी धर्म एवं सम्प्रदाय को मानने वाले यह भली-भाँति जान चुके हैं कि इन मूक एवं निरीह प्राणियों की बलि चढ़ाए जाने से देवता प्रसन्न नहीं हो सकते। इन प्राणियों की जीवन रक्षा करना हम सब का परम कर्त्तव्य है, धर्म है। आज जब असहाय और मूक पशु-पक्षियों की विभिन्न प्रजातियों के संरक्षण करने हेतु केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों द्वारा अनेक कल्याणकारी कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, तो ऐसी परिस्थितियों में उनकी बलि चढ़ाए जाने पर रोक नहीं लगाया जाना दुर्भाग्यपूर्ण है।

३. अहिंसा, दया, करुणा की प्रतिमूर्ति भगवान् महावीर स्वामी के २६०२ वें जन्म जयन्ती वर्ष के पुनीत प्रसंग पर हम आप जैसे संवेदनशील एवं अनुशासन प्रिय महोदय से अनुरोध करते हैं कि मंदिरों एवं धार्मिक उपासना स्थलों की पवित्रता को बनाए रखने हेतु प्रदेश में पशु-पक्षी बलि प्रतिषेध विषयक अधिनियम बनवाकर, उसका अतिशीघ्र पालन करना सुनिश्चित करावें और प्रदेश में व्याप्त इस सामाजिक बुराई को दूर करके मूक पशु-पक्षियों का अभयदान दिलवाएँ।

४. यहाँ विशेष रूप से यह भी ध्यातव्य है कि इस विषय में देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही विभिन्न प्रदेशों में प्रयास किए जाकर अधिनियम बनाए जा चुके हैं, जो संलग्न हैं :-

१. मैसूर पशु बलि निवारण अधिनियम, १९४८ (देखें, पृष्ठ ४५०)
The Mysore Prevention of Animal Sacrifices Act, 1948 (Mysore Act L I of 1948). (See, Page 462)

२. आन्ध्रप्रदेश पशु-पक्षियों की बलि (प्रतिषेध) अधिनियम, १९५० (देखें, पृष्ठ ४७९-४८०)
(संशोधन अधिनियम, दिसम्बर १९७० द्वारा संशोधित १९७० का १५ वाँ)
The Andhra Pradesh Animals and Birds Sacrifices (Prohibition) Act, 1950 (32 of 1950)
(As amended upto December 1970, wide the Andhra Pradesh Animals and Birds Sacrifices Prohibition (Amandment) Act, No 15 of 1970) (See, Page 481-483)

३. तमिलनाडु पशु-पक्षी बलि प्रतिषेध अधिनियम १९५० (देखें, पृष्ठ ४९५-४९६)
Tamil Nadu Animals and Birds Sacrifices (Prohibition) Act, 1950 (See, Page 505)
Madras Animals And Birds Sacrifices Prohibition Act, 1950
(Madras Act No. xxxII of 1950) (See, Page 462)

४. कर्नाटक पशु बलि प्रतिषेध अधिनियम, १९५९ (देखें, पृष्ठ ४४७-४५०)
The Karanataka Prevention of Animals Sacrifices Act, 1959 [3 of 1960] (See, Page 460-463)

५. कर्नाटक पशु बलि प्रतिषेध नियम, १९६३ (देखें, पृष्ठ ४५०)
The Karanataka Prevention of Animals Sacrifices Rules, 1963 (See, Page 460-463)
The Karanataka Prevention of Animals Sacrifices (Amendment) Act, 1975 [No. 21 of 1975]

६. पाण्डिचेरी पशु-पक्षी बलि प्रतिषेध अधिनियम, १९६५ (देखें, पृष्ठ ५७२-५७३ एवं ४२५)
The Pondicherry Animals And Birds Sacrifices Prohibition Act, 1965 [8 of 1965] (See, Page 425-426)

७. केरल पशु-पक्षी बलि प्रतिषेध अधिनियम १९६८ (देखें, पृष्ठ ५०६-५०७)
The Kerala Animals and Birds Sacrifices Prohibition Act, 1968 [20 of 1968]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(See, Page 507-508 and Page 381-382)

८. Andhra Pradesh Animals and Birds Sacrifices Prohibition (Amendment) Act, 1970 [No. 15 of 1970]

(See, Page 483)

९. गुजरात पशु और पक्षी बलि (प्रतिषेध) अधिनियम, १९७२ (देखें, पृष्ठ ३८४-३८५)

The Gujrat Animals and Birds Sacrifices (Prevention) Act, 1972 (See, Page 318)

१०. राजस्थान पशु-पक्षी बलि (प्रतिषेध) अधिनियम, १९७५ (देखें, पृष्ठ ३८४-३८५)

The Rajasthan Animals and Birds Sacrifices (Prohibition) Act, 1975 (See, Page 447-448)

(सन्दर्भ १. 'भारतीय जीव-जन्तु एवं गोरक्षा विधि संग्रह' लेखक : उदयलाल जारोली, पूर्व प्राचार्य एवं विधि संकायाध्यक्ष, नीमच (म.प्र.), प्रकाशक : सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, प्राप्ति स्थान : भारतीय जीवजन्तु कल्याण बोर्ड, पो.बा.नं. ८६७२, थर्ड सी वार्ड रोड, वाल्मीकि नगर, तिरुवानमियूर, चेन्नई - ६०० ०४१, तमिलनाडू)

२. Animal Lawa of India, By Maneka Gandhi, Ozair Husain,Raj Panjwani, Pub-Universal Law Pub. Co. Pvt. Ltd. (C-FF-1A, Ansal's Dilkhush Industrial Estate, G.T. Karnal Road, Delhi - 110 003, Second Edition - 2001)

५. प्रदेश की जनता की भावना को साकार करने हेतु पहले फरवरी-अप्रैल १९७९ के विधानसभा सत्र में 'मध्यप्रदेश पशु पक्षी बलि प्रतिषेध अध्यादेश, १९७५ (क्र. १२ सन् १९७५)' ११ सितम्बर १९७५ को एक निश्चित समयावधि हेतु लागू किया गया था। अधिनियम का रूप नहीं ले पाने से वह स्वयमेव प्रभावहीन हो गया। बाद में 'मध्यप्रदेश पशु-पक्षी बलि प्रतिषेध विधेयक १९७९ (क्र. १२ सन् १९७९)' भाजपा के शासनकाल में भारसाधक मंत्री शिवप्रसाद चिनपुरिया द्वारा ६.२.१९७९ को विधानसभा में प्रस्तुत किया गया जो, विधान सभा से पारित हो चुका है। यह मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) २६.२.१९७९ में पृष्ठ क्र. ६३१-६३३ पर प्रकाशित भी हो चुका है। इस विधेयक की प्रति संलग्न है। ज्ञात जानकारी के अनुसार यह विषय संविधान की सप्तम अनुसूची की राज्यसूची (२) के साथ पठित समवर्ती सूची के परिशिष्ट १७ (ब) के अन्तर्गत आता है, अत: इसे केन्द्र शासन एवं महामहिम राष्ट्रपति महोदय की अनुमति के लिए भेजा गया था। उनके द्वारा कुछ संशोधन के साथ १ फरवरी १९८३ को अनुमति प्रदान कर दी गई थी। बाद में आवश्यक संशोधन हेतु 'म.प्र. पशु-पक्षी बलि प्रतिबंध (संशोधन) अध्यादेश, १९८३' भी तैयार किया गया था।

६. अत्यन्त खेद का विषय है कि विगत २५ वर्षों के बाद भी यह विधेयक आज तक अधिनियम का रूप धारण नहीं कर पा रहा है। जहाँ देश के अनेक प्रान्तों में पशु-पक्षी की बलि प्रतिषिध्य है, वहीं अधिनियम अभाव में छत्तीसगढ़/मध्यप्रदेश में खुले-आम बलि करने का कार्य जारी है। स्मरणीय है कि पशुओं के प्रति जारी क्रूरता, बर्बरता एवं बीभत्सता के कारण आन्ध्रप्रदेश एवं मध्यप्रदेश के उच्च न्यायालयों में दाखिल किए गये वादों पर माननीय न्यायमूर्तियों ने स्थगन आदेश भी जारी किए हैं, यथा-

१. माननीय न्यायमूर्तिद्वय श्री वाई. भास्कर राव एवं श्री आर. वयापूरेड्डी, डिवीजन बेंच, उच्च न्यायालय, आन्ध्रप्रदेश, हैदराबाद द्वारा २.४.१९९७ को रिट पिटीशन क्र. ३७८६- 'ए.पी. जीव रक्षा संघ गुंटूर/मुख्य सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग आन्ध्रप्रदेश, हैदराबाद' वाद पर जारी आदेश।

२. माननीय न्यायमूर्तिद्वय श्री दीपक वर्मा एवं श्री ए.के. गोहिल, डिवीजन बेंच, उच्च न्यायालय, मध्यप्रदेश, इन्दौर खण्डपीठ, इन्दौर द्वारा १३.२.२००२ को रिट याचिका क्र. २८१/०२ डिवीजन 'निमाड़ जीव-जन्तु कल्याण संगठन एवं अन्य/म.प्र. राज्य एवं अन्य' वाद पर जारी आदेश।

३. माननीय न्यायमूर्तिद्वय मुख्य न्यायमूर्ति श्री भवानीसिंह एवं श्री के.के. लाहोटी, डिवीजन बेंच, उच्च न्यायालय, मध्यप्रदेश, जबलपुर मुख्यपीठ, जबलपुर द्वारा ८.३.२००२ को रिट याचिका क्र. डब्ल्यू.पी. ११५६/२००२, 'सचिव प्राणी रक्षा संघ, बुरहानपुर/म.प्र. राज्य एवं अन्य' वाद पर जारी आदेश।

८. अतएव विभिन्न प्रान्तों में प्रभावशील पशु-पक्षी बलि प्रतिषेध अधिनियमों, आन्ध्रप्रदेश एवं मध्यप्रदेश के दो-दो खण्डपीठों के स्थगन आदेशों को दृष्टिगत रखते हुए प्रदेश में पशु-पक्षी बलि प्रतिषेध सम्बन्धी स्वतंत्र विधेयक प्राथमिकता से पारित कराया जाए अथवा पूर्ववर्ती में आवश्यक एवं उचित संशोधन करके उसे ही अधिनियम के रूप में मान्यता प्रदान की जाए, ऐसा हम सभी का अनुरोध है।

भवदीय

संलग्न- १.विभिन्न प्रान्तों के उपर्युक्त पशु-पक्षी बलि प्रतिषेध अधिनियम की प्रतिलिपियाँ।

२. आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय की हैदराबाद पीठ द्वारा जारी आदेश की प्रतिलिपि।

३. म.प्र. उच्च न्यायालय की इन्दौर एवं जबलपुर खण्डपीठ द्वारा जारी आदेश की प्रतिलिपि।

४. म.प्र. विधानसभा द्वारा १९७९ में पारित विधेयक की हिन्दी एवं अंग्रेजी प्रति की प्रतिलिपि।

५. इस विषयक अन्य सामग्री।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

मुनिश्री सुधासागरजी के सान्निध्य में रचा गया सुनहरा इतिहास

सिद्धक्षेत्र गिरनारजी की पहली टोंक पर त्रिकाल चौबीसी का शिलान्यास

सिद्धक्षेत्र गिरनार (गुजरात) दिगम्बर जैन संत मुनिपुंगव श्रीसुधासागर जी महाराज की १० फरवरी को गिरनार सिद्ध क्षेत्र की निरन्तर ५ वीं वन्दना पूरी हो गई। मुनिश्री एवं संघ के साथ हजारों श्रावकों ने पाचों टोंकों पर अभिषेक, पूजा-अर्चना की सोहार्दपूर्ण वातावरण में गिरनार सिद्धक्षेत्र की पांचों टोंकों पर वंदना जैन जगत की ऐतिहासिक घटना है। मुनिश्री ने ६ फरवरी से गिरनार सिद्ध क्षेत्र की वन्दना शुरु की थी। इसके बाद लगातार प्रतिदिन तलहटी से पूरी पाँच वन्दना की। मुनिश्री के साथ ऐलक सिद्धान्तसागर जी, क्षुल्लकद्वय श्री गम्भीरसागरजी, धैर्यसागर जी, ब्र. संजय भैया एवं हजारों श्रावक साथ थे। पाँचवी टोंक पर नेमीनाथ भगवान के चरण चिन्हों का सोहार्द पूर्ण वातावरण में अभिषेक-पूजन होना ही अपने आप में बहुत बड़ा अतिशय है। दिगम्बर जैन मुनि के प्रभाव से शेर और गाय एक ही घाट पर पानी पीते थे। आज यह दृश्य साक्षात् मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज के सान्निध्य में पाँचवी टोंक पर देखने को मिला जहाँ पर समस्त लोग साम्प्रदायिक विद्वषोंको भूलकर एक दूसरे की श्रद्धा भावना का सम्मान कर रहे थे। मुनिश्री के साथ पांचवी टोंक पर अभिषेक के समय सैकड़ों श्रद्धालु मौजूद थे। पूज्य मुनिश्री संघ सहित कोटा (राज.) से २० दिसम्बर २००३ को विहार कर जैन तीर्थ पावागढ़, घोघा, सोनगढ़ और पालीताना की वन्दना करते हुये ११०० कि.मी. पदयात्रा कर हजारों श्रावकों के साथ ५ फरवरी को प्रात: गिरनार तलहटी में साज-बाज के साथ ऐतिहासिक मंगल प्रवेश हुआ। मंगल प्रवेश के समय केसरिया ध्वज लिये सैकड़ों लोग साथ चल रहे थे। महिलाएँ मंगल कलश लिये थीं। देश के विभिन्न प्रांतों से आये हजारों श्रद्धालु जयकारे लगाते साथ चल रहे थे। उत्साह और उमंग के साथ सैकड़ों लोग नृत्य करते हुए आगे-आगे चल रहेथे। केसरिया गुलाल उड़ाते चल रहे युवकों ने पूरा वातावरण केसरिया मय बना दिया। बाद में शोभायात्रा सनातन धर्मशाला के प्रांगण में विशाल धर्मसभा में बदल गई। सभा की शुरुआत में पदयात्रा के संयोजक श्री हुकुमजैन 'काका' कोटा को गुजरात व राजस्थान की अनेकों जैन संस्थाओं की ओर से सम्मान दिया गया। उनके साथ पदयात्रा पर आये सांगानेर, जयुपर, किशनगढ़, अजमेर, आंवा, कोटा (राज.) के १०० से भी अधिक लोगों का सम्मान किया गया।

इस अवसर पर धर्मसभा को सम्बोधित करते हुये मुनिश्री ने कहा कि 'जब एक ही स्थान से अनेकों भक्तों की आस्था जुड़ी हो तो हमारी परम्परा और संस्कृति यह कहती है कि हमें सबकी भावना का सम्मान करना चाहिए। हमारी संस्कृति शेर और गाय के एक ही घाट पर पानी पीने की रही है। ये जैन धर्म के अहिंसा के सिद्धान्त में ही इतनी शक्ति है। मुनिश्री ने कहा कि हमें वात्सल्य एवं सोहार्दपूर्ण वातावरण बनाना है।' मुनिश्री के प्रवचन सन्देश के रूप में पूरे गिरनार क्षेत्र के जैन एवं अजैनों में प्रसारित होते हैं। वहाँ का वातावरण सोहार्दपूर्ण बना हुआ है और मुनिश्री के गिरनार तलहटी की दि. जैन धर्मशाला में प्रवास के दौरान क्षेत्र के अनेकों राजनेताओं एवं महंतों का दर्शनार्थ आना-जाना लगा रहता है। क्षेत्रीय सांसद एवं केन्द्रिय राज्यमंत्री श्रीमति भावनाबेन चिखलिया सपरिवार, विधायक भाई सुरेजा, जूनागढ़ की पूर्व नगरपालिका प्रमुख श्रीमति आरती बेन जोशी, कमण्डल कुण्ड के ट्रस्टी एवं महंत श्री महेशगिरिजी के निजि सचिव श्री नीरव पुरोहित इत्यादि लोगों ने मुनिश्री के दर्शन किये और सान्निध्य प्राप्त किया। महंत मेघानन्दजी एवं महंत मुक्तानन्दजी से गिरनार क्षेत्र के विषय में सोहार्दपूर्ण चर्चा हुई। श्री नीरव पुरोहित ने मुनिश्री से लगभग आधा घण्टे तक पांचवी टोंक के बारे में सोहार्दपूर्ण वार्ता की उन्होंने बताया कि पांचवीं टोंक पर स्थापित भगवान नेमीनाथ के चरण चिन्ह जिन्हें अन्य सम्प्रदाय गुरु दत्तात्रेय के चरण मानता है, जिनके दर्शनार्थ प्रतिदिन इस टोंक पर सभी मतावलम्बी आते हैं। श्री नीरव पुरोहित ने मुनिश्री से कहा कि हमारी तरफ से इस टोंक पर नेमीनाथ भगवान की जय बोलने पर कोई आपत्ति नहीं है। साथ ही कहा कि पांचवी टोंक पर सभी मतावलम्बी आपस में सोहार्दपूर्ण वातावरण में पूजा अर्चना कर सकें ऐसा उनका प्रयास रहेगा। बाद में उन्होंने मुनिश्री से अनुरोध किया कि आप कुछ दिन के लिये ऊपर ही विराजें।

पांच वन्दना पूर्ण करने के बाद मुनिश्री ने प्रबन्ध कमेटी के विशेष आग्रह पर गिरनार पर्वत की पहली टोंक पर स्थित दिगम्बर जैन मंदिर के प्रांगण में त्रिकाल चौबीसी के निर्माण हेतु अपना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आशीर्वाद प्रदान किया। त्रिकाल चौबीसी के निर्माण हेतु उत्साही दानदाताओं ने अपनी स्वीकृतियाँ प्रदान करना भी आरम्भ कर दिया। श्री गिरनार सभापति राजा रमलेश जैन बण्डी ने बताया कि संत शिरोमणि आ. विद्यासागरजी महाराज के परमशिष्य मुनिपुंगव श्री सुधासागरजी महाराज, ऐलक श्री सिद्धान्तसागरजी महाराज, क्षुल्लकद्वय श्री गम्भीरसागरजी, धैर्यसागरजी महाराज के पावन सान्निध्य में त्रिकाल चौबीसी का शिलान्यास समारोह सम्पन्न हुआ। पर्वतराज दिगम्बर जैन मंदिर में त्रिकाल चौबीसी का शिलान्यास श्रेष्ठीश्रीमान नरेशभाई सूरत वालों ने प्रतिष्ठाचार्य ब्र. जिनेश भैया अधिष्ठाता गुरुकुल जबलपुर के निर्देशन में विधि विधान पूर्वक किया गया। त्रिकाल चौबीसी मंदिर नरेश भाई सूरतवालों की ओर से एवं अन्य १२ मंदिरों का निर्माण समाज के दानदाताओं की ओर से कराया जायेगा। इस पुण्य अवसर पर विभिन्न स्थानों के दातारों ने दानराशि देने की घोषणा मुनिश्री के सान्निध्य में की। बण्डीलाल जैन ने बताया कि मंदिर निर्माण का कार्य तीन वर्ष की अवधि में पूर्ण कराया जायेगा। तलहटी पर स्थित जैन मंदिर व धर्मशाला का भी जीर्णोद्धार कराया जायेगा। मंदिर परिसर में विशाल जैन स्तम्भ का भी निर्माण कराया जायेगा। इस अवसर पर पर्वत स्थित त्रिकाल चौबीसी के निर्माण के लिये राजस्थान सहित विभिन्न प्रान्तों के प्रतिनिधियों वाली निर्माण समिति का गठन किया गया।

हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न उक्त समारोह के पश्चात मुनिश्री ने जीर्णोद्धार व नवनिर्माण का आशीर्वाद क्षेत्रिय कमेटी को देकर ससंघ सिद्धक्षेत्र तारंगा जी के लिये मंगल विहार किया। राजा रमलेश बण्डी ने त्रिकाल चौबीसी, मंदिर व धर्मशाला में नवीन डीलक्स कमरों आदि के निर्माण में दातारों से दान देने की अपील की। इस अवसर पर हुकुम जैन काका कोटा, ऋषभ मोहिवाल कोटा, निहालचन्द पहाड़िया किशनगढ़, डॉ. सुधीरजैन सागर, विमलचन्द्र, अनिलकुमार, उत्तमचन्द पाटनी जयपुर, सुरेन्द्रकुमार जैन, नरेश पहाड़िया व रोशन लाल ने दान देने की घोषणा की। क्षेत्र कमेटी के उप सभापति श्री निर्मलकुमार जी बंडी, मंत्री श्री सुरेन्द्रकुमार जी पाडलिया, क्षेत्र कार्यकर्ता श्री प्रदीप बी. जैन ने सभी श्रावकों के इस अवसर पर पधारने का आभार प्रदर्शन किया और पुनः दर्शनार्थ पधारने हेतु विशेष आग्रह किया है। तलहटी धर्मशाला से जुड़े महानुभावों का कहना था कि उन्होंने जीवन में पहली बार इतने कम समय में हजारों जैन यात्रियों का यहाँ आवागमन देखा है।

निर्मल कासलीवाल
मानद मंत्री
जैन मंदिर रोड, सांगानेर (जयपुर)

क्षुल्लिका श्री सुदृढ़मति जी का सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण

जंगल बाले बाबा के नाम से प्रसिद्ध संत मुनिवर श्री चिन्मयसागर जी महाराज एवं आर्यिका श्री प्रशांतमति माताजी ससंघ के सानिध्य में क्षुल्लिका श्री १०५ सुदृढ़मति माताजी का पुण्याभूति योग में सल्लेखना पूर्वक समाधि मरण हो गया।

जबलपुर में वृहत शांति विधान कार्यक्रम सम्पन्न विधान में मुनि संघ के अल्प प्रवास से महती धर्म प्रभावना

मुनिश्री समतासागर, मुनि श्री प्रमाणसागर, ऐलक श्री निश्चयसागर जी के दो दिवसीय जबलपुर प्रवास के अवसर पर अभूतपूर्व धर्म प्रभावना हुई। बिलहरी से रामटेक की ओर बिहार करते हुए मुनि संघ का नगरागमन हुआ। अधारताल शिवनगर के जिन मंदिरों की वंदना कर संघ श्री चन्द्राप्रभु दि. जैन मंदिर संगम कॉलोनी पहुँचा। संगम कॉलोनी में मुनि संघ का संक्षिप्त प्रवचन हुआ। हजारों की संख्या में जनसैलाब उमड़ पड़ा। सभी की आकांक्षा थी कि संघ कुछ दिन और यहाँ रूके। रात्रि विश्राम के पश्चात् प्रातः श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर गोलवाजार में चल रहे १६ दिवसीय शांति विधान में संघ का सान्निध्य प्राप्त हुआ। जहाँ अपने प्रवचनों में मुनि संघ ने कहा कि आश्रय विहीन लता पल्लवित नहीं हो सकती धर्म रूपी लता का सहारा लेकर ऊर्ध्व गति की ओर अग्रसर हुआ जा सकता है। गोलबाजार में विराजे मुनिश्री पावन सागर जी भी मंच पर उपस्थित थे। संघ यहाँ से अग्रवाल कॉलोनी के जिन मंदिर पहुँचा जहाँ संक्षिप्त प्रवचनों के बाद श्री दिगम्बर जैन अतिशय तीर्थ क्षेत्र पिसनहारी की मढ़िया की ओर विहार हुआ। मुनि श्री प्रबुद्धसागर जी एवं आर्यिका श्री गुणमति माताजी (ससंघ) ने संघ की आगवानी की। श्री तीर्थ क्षेत्र पिसनहारी की मढ़िया में आहार चर्या सम्पन्न हुई।

मध्यान्ह में विद्यानुभूति भवन में प्रवचन आयोजित हुये। पिसनहारी की मढ़िया में चल रहे १६ दिवसीय शांति विधान के कार्यक्रम में भी संघ के आशीर्वचन हुये। मुनिसंघ के आगमन से ऐसा लगा मानो सारा शहर ही दर्शनार्थ आ पहुँचा। रात्रि विश्राम मढ़िया जी में करने के बाद प्रातः संघ भारतवर्षीय प्रशासकीय प्रशिक्षण संस्थान पहुंचा। प्रशिक्षणार्थियों को आशीष वचन देकर दयोदय तीर्थ तिलवाराघाट की ओर विहार हुआ। दयोदय तीर्थ पर एक धर्मसभा आयोजित हुई। शहर से १५ कि.मी. दूर स्थित दयोदय तीर्थ मुनि संघ के सान्निध्य में वास्तविक तीर्थधाम नजर आ रही थी। मध्यान्ह में संघ का बरगी की ओर विहार हुआ। मात्र दो दिन के अल्प प्रवास में चातुर्मास जैसी अद्वितीय प्रभावना नजर आ रही थी।

अमित पड़रिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूचना

गत वर्ष २००३ फरवरी में अहमदाबाद के उपनगर शिवानंदनगर में आयोजित जिनबिंब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के शुभ अवसर पर देश के मूर्धन्य साहित्यकार क्षुल्लक श्री मनोहरलाल जी वर्णीजी के साहित्य के अध्येता, शोधकर्ताओं को प्रोत्साहित करने के लिए प्रतिवर्ष 'श्री सहजानंद वर्णी साहित्य पुरस्कार' प्रदान करने की योजना बनाई गई थी। उसी श्रृंखला में इस वर्ष भी वर्णी साहित्य के अध्येता को यह पुरस्कार प्रदान किया जायेगा। पुरस्कार में ११ हजार रुपये की राशि, प्रतीक चिन्ह भव्य कार्यक्रम में प्रदान की जायेगी।

वर्णी साहित्य के अध्येता-शोधार्थी स्वयं या अन्य विद्वानों द्वारा नाम दिनांक १० मार्च तक प्रेषित करें। तीन विद्वानों की समिति द्वारा चयनित विद्वानों को यह पुरस्कार प्रदान किया जायेगा।

कृपया विद्वान अध्येता के नाम इस पते पर प्रेषित करें-

डॉ. शेखरचन्द्र जैन, २५, शिरोमणि बंगलोज, सी.टी.एम. चार रास्ता के पास अमराईबाड़ी, अहमदाबाद - ३८० ०२६

भवदीय
डॉ. शेखर चन्द्र जैन, संयोजक

भगवान आदिनाथ का मोक्ष कल्याणक समारोह पूर्वक मनाया

मदनगंज - किशनगढ़ (जिला-अजमेर, राज.) के आदिनाथ दि. जैन मंदिर जी में प्रात: काल ऋषभनाथ के मोक्ष कल्याणक के उपलक्ष्य में २० जनवरी २००४ को निर्वाण लड्डू समस्त दिगम्बर जैन समाज द्वारा चढ़ाया गया।

दोपहर में चेलना जैन जागृति महिला मंडल द्वारा महिलाओं के लिये खुला प्रश्न मंच का कार्यक्रम रखा गया। कार्यक्रम का संचालन मंडल की सांस्कृतिक मंत्री श्रीमती शशि प्रभा बज द्वारा कियां गया। इसके अलावा भगवान के जीवन चरित्र पर श्रीमती सुशीला जी पाटनी (R.K. Marbles) मंडल की मंत्री आशा अजमेरा, नवरत्नदेवी दगड़ा, शशि प्रभा बज, गुणमाला छाबड़ा व जतन सोनी ने अपनी वार्ता दी। अन्त में मंडल की अध्यक्षा श्रीमती शान्ता पाटनी (R.K. Marbles) ने प्रतियोगियों व सभी वक्ताओं को पुरस्कार दिये तथा अपने धन्यवाद भाषण में धर्म प्रभावना बढ़ाने हेतु ऐसे कार्यक्रम करने हेतु प्रोत्साहित किया।

सायंकाल महिला मंडल द्वारा संचालित दिगम्बर जैन पाठशाला के बच्चों के लिये प्रश्न मंच कार्यक्रम रखा। साथ ही बच्चों को धर्म की परीक्षा में उत्तीर्ण होने व प्रश्न मंच के लिये पुरस्कार दिये। सभी कार्यक्रम आदिनाथ मंदिर के अध्यक्ष श्री मूलचंद जी लुहाड़िया को देखरेख में सानन्द संपन्न हुए।

श्रीमती शशि प्रभा बज
सांस्कृतिक मंत्री,
चेलना जागृति महिला मंडल
मदनगंज- किशनगढ़, अजमेर-राज.

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र कैथोली

श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र कैथोली मध्यप्रदेश के मदंसोर जिले के गरोठ उपखण्ड में भानपुरा से २० कि.मी. तथा रामगंज मण्डी जिला, कोटा (राज.) से १५ कि.मी. दूर है।

कैथोली अतिशय क्षेत्र पर लगभग ११०० वर्ष प्राचीन भव्य एवं कलात्मक जिनालय है। जहाँ चतुर्थ काल की चौबीसी और कई मनोहारी और चमत्कारिक प्रतिमाएँ विद्यमान हैं।

इस जिनालय में गर्भगृह भी स्थित है। मुनिपुगंव श्री सुधासागर जी महाराज, क्षु. गम्भीरसागर जी, क्षु. धैर्यसागर जी ससंघ यहाँ पधारे हुए हैं। अतिशयकारी मूर्ति भगवान श्री पार्श्वनाथ की प्रतिमा के दर्शन करते ही मुनिश्री ने कहा 'प्रतिमा अत्यन्त मनोहारी है और मैं इस प्रतिमा के दर्शन मात्र से अत्यन्त गदगद हूँ।'

महाराज श्री ने प्रात: कालीन प्रवचन में इस बात के संकेत दिये कि इस क्षेत्र पर जो अज्ञात सुरंग है उसमें अनेक रहस्य छुपे हुए हैं, परन्तु उन रहस्यों को मैं अभी उजागर नहीं कर सकता हूँ। समय के साथ वे सभी रहस्य उजागर होंगे।

इस क्षेत्र पर उपलब्ध शिलालेखों से इस बात की पुष्टि होती है कि इस क्षेत्र का निर्माण मालवा देश के महाराज श्री राव दुर्गा के राज्य रामपुर के ग्राम कैथोली में बघेरवाल जाति के धानोतिया गोत्र के शाह कवलसी के परिवार द्वारा कराया गया था।

प्रेमचन्द दगेरिया
बाजार नं. १, रामगंजमण्डी

पद्मश्री प्रोफेसर डॉ. सुनीता जैन

साहित्य संस्था अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा सम्मानित

प्रसिद्ध सामाजिक साहित्यिक संस्था अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा आई.आई.टी., नई दिल्ली में अंग्रेजी के प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष पर से सेवानिवृत हिन्दी एवं अंग्रेजी की सिद्धहस्त तथा सुप्रसिद्ध कवियित्री, उपन्यासकार एवं लघुकथा लेखक डॉ. सुनीता जैन का भारत सरकार द्वारा २६ जनवरी को 'पद्मश्री' मिलने पर संस्था के स्थापना दिवस पर नई दिल्ली में भावभीना सम्मान किया गया।

लेखन में अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त डॉ. सुनीता जैन अमेरिका से 'व्रीलैन्ड सम्मान' तथा 'मेरी सेन्डोज प्रेरी स्कूनर' सम्मान प्राप्त कर चुकी हैं। इसके अतिरिक्त इनको 'निराला नामित साहित्यकार सम्मान' 'महादेवी वर्मा सम्मान' आदि से भी सम्मानित किया जा चुका है। वर्तमान में वह २००२-२००४ के लिए 'इन्दिरा गाँधी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फेलो' चुनी गई हैं। आपने अमेरिका, लन्दन, बैंकाक, नेपाल, मारीशस में प्रायोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में आलेख प्रस्तुति किए हैं।

पंजाब में सेशन जज श्री सुल्तानसिंह जैन के यहाँ १३ जुलाई १९४१ को जन्म लेकर सुनीता जैन ने अंग्रेजी में एम.ए. न्यूयार्क की स्टेट युनीवर्सिटी से किया और डाक्ट्रेट की उपाधि अमेरिका के ही लेब्रास्का विश्वविद्यालय से प्राप्त की। आपकी अब तक साठ कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं और लेखन कार्य निरन्तर जारी है। सम्मान समारोह में भारतीय ज्ञानपीठ के प्रबंध न्यासी डॉ. साहू रमेशचन्द्र जैन एवं संस्था के महासचिव श्री सतीश कुमार जैन ने उनके गौरवमयी कृतित्त्व पर विचार व्यक्त किये।

सतीश कुमार जैन
महासचिव

'ज्ञान के हिमालय' का लोकार्पण

आगरा, ११ फरवरी २००४ राष्ट्रसंत सराकोद्धारक पूज्य उपाध्याय श्री १०८ ज्ञानसागर जी महाराज की जीवन गाथा पर आधारित, विख्यात लेखक श्री सुरेश जैन 'सरल' की लेखनी से निःसृत एवं आचार्य शान्तिसागर 'छाणी' स्मृति ग्रन्थमाला से प्रकाशित महाकथा 'ज्ञान के हिमालय' का लोकार्पण आगरा के श्री एम.डी. जैन कालिज में आयोजित श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव समारोह में ज्ञान कल्याणक के अवसर पर पूज्य उपाध्यायश्री के सान्निध्य में आयोजित भव्य समारोह में हुआ।

हंस कुमार जैन

सूचना

षष्ट आत्म-साधना शिक्षण शिविर

श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन शांतिनिकेतन
उदासीन आश्रम
पो. ईसरी बाजार, जिला-गिरिडीह (झारखंड)
दिनाक २५.४.२००४ से २.५.२००४

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से सिद्धक्षेत्र श्री सम्मेद शिखर जी के पादमूल में स्थित प्राकृतिक छटा से विभूषित परम पूज्य क्षुल्लक १०५ श्री गणेश प्रसाद जी वर्णी की साधना स्थली- उदासीन आश्रम, इसरी बाजार में पं. श्री मूलचन्द्र जी लुहाड़िया मदनगंज (किशनगढ़) बाल ब्र. पवन भैया, कमल भैया आदि के सान्निध्य में षष्ट आत्म-साधना शिक्षण शिविर का आयोजन होने जा रहा है, इस शिविर का मूल लक्ष्य होगा-

इस बहुमूल्य पर्याय का अविशिष्ट समय किस प्रकार बिताया जाये ताकि आत्मा का विकास हो सके।

निवेदक
ट्रस्टी व कार्यकारिणी समिति के सदस्यगण
श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन शांतिनिकेतन उदासीन आश्रम
पो. ईसरी बाजार, जिला-गिरिडीह (झारखंड)

शिविरार्थियों के लिये आवास/भोजन की निःशुल्क व्यवस्था है। विशेष जानकारी के लिये पत्र-व्यवहार करें

सम्पत लाल छाबड़ा
१८८/१/ जी, मानिकतला, मैन रोड
कोलकाता ७०० ०५४

पी.एच.डी.उपाधि से विभूषित

वाराणसी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी में जैन दर्शन विभागाध्यक्ष डॉ. फूलचन्द जैन 'प्रेमी' के कुशल निर्देशन में निम्न शोध पत्रों को वर्ष २००२ की विद्या वारिधि (पी.एच.डी.) उपाधि से विश्वविद्यालय द्वारा विभूषित किया गया है।

१. गुण भद्राचार्य कृत आत्मानुशासन का समीक्षात्मक अध्ययन - **डॉ. बसन्त कुमार जैन**

२.जैनाचार्य महाकवि ज्ञानसागर विरचित जयोदय महाकाव्य का दार्शनिक अध्ययन - **डॉ. पंकज कुमार जैन**

३. महाकवि अर्हद्दास विरचित मुनिसुव्रत काव्य का गवेषणात्मक अध्ययन - **डॉ. देवेन्द्र सिंह**

सभी शोध प्रबन्ध संस्कृत भाषा में लिखे गये हैं। जैन विद्या में हुए इस अनुसंधान के लिए उक्त शोध छात्रों को हार्दिक बधाई।

भगवान सुपार्श्वनाथ का ज्ञान एवं निर्वाण कल्याणक हर्षोल्लास पूर्वक मनाया गया

वाराणसी, सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ भगवान् की निर्वाण कल्याणक तिथि फाल्गुन कृष्ण सप्तमी को भदैनी वाराणसी में पवित्र गंगा नदी के किनारे स्थित सुपार्श्वनाथ तीर्थंकर की गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान कल्याणक भूमि पर निर्वाण लाडू हर्षोल्लास पूर्वक चढ़ाया गया। इससे पूर्व फाल्गुन कृष्ण षष्टी को भगवान् सुपार्श्वनाथ का ज्ञानकल्याणक भी उत्साह पूर्वक श्री स्याद्वाद महाविद्यालय के तत्त्वाधान में मनाया गया। उल्लेखनीय है कि यहाँ पर सुप्रसिद्ध स्याद्वाद महाविद्यालय भी संचालित है।

जैन संस्कार शिक्षण शिविरों की मचेगी धूम

वाराणसी- परम पूज्य सराकोद्धारक उपाध्याय श्री १०८ ज्ञानसागर जी महाराज की प्रबल प्रेरणा व आशीर्वाद से श्रुत संवर्द्धन संस्थान मेरठ के तत्त्वाधान में विगत वर्षों की भाँति इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्ष भी श्रुत संवर्द्धन ज्ञान संस्कार शिक्षण शिविरों का आयोजन मई-जून में एक ही तिथि में विशाल स्तर पर आयोजित होंगे। बुंदेलखण्ड एवं मुजफ्फरनगर संभाग में ४० स्थानों पर शिविर लगाने की योजना बनायी गयी है।

पं. सुनील जैन 'संचय' जैनदर्शनाचार्य (नरवाँ)
श्री स्याद्वाद महाविद्यालय बी. ३/८०, भदैनी,
वाराणसी २२१ ००१

शिविर सूचना

श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर, जयपुर द्वारा प्रतिवर्ष ग्रीष्मकालीन धार्मिक शिक्षण शिविरों का आयोजन किया जाता है। इस वर्ष भी संस्थान के विद्वानों द्वारा अनेकों स्थानों पर धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजित हो रहे हैं। अत: समाज से अनुरोध है कि जो अपने ग्राम/शहर कॉलोनी तथा क्षेत्रों आदि पर शिविर आयोजित करवाना चाहते हैं, वे महानुभाव यथाशीघ्र निम्नलिखित पते पर सम्पर्क करें।

रतन लाल बैनाड़ा
अधिष्ठाता
श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान
१/२०५, प्रोफेसर्स कॉलोनी, हरीपर्वत, आगरा (उ.प्र.)
फोन : ०५६२-२१५१४२८, २१५२२७८

वसंत कुंज नई दिल्ली में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव 13 अप्रेल से 20 अप्रेल 2004 तक

श्री दिगम्बर जैन मंदिर वसंतकुंज नई दिल्ली में भगवान १००८ श्री आदिनाथ जिन बिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव एवम् विश्वशांति महायज्ञ १३ अप्रेल २००४ मंगलवार से २० अप्रेल २००४ मंगलवार तक सिद्धांत चक्रवर्ती परम पूज्य आचार्य श्री विद्यानन्द जी मुनिराज की सत्प्रेरणा, आशीर्वाद एवम् सान्निध्य में होगा। पूज्य उपाध्याय श्री श्रुतसागर जी महाराज एवम् पूज्य आर्यिका बाहुबली माताजी का भी सान्निध्य प्राप्त होगा। पंचकल्याणक के प्रतिष्ठाचार्य संहितासूरी पं.श्री नाथूलाल जी शास्त्री के शिष्य पं. विजय कुमार जी शास्त्री इन्दौर एवम् सहयोगी प्रतिष्ठाचार्य पं.श्री बाहुबली पार्श्वनाथ उपाध्ये वेलगाँव होंगे।

धरमचंद बाझल्य

प्रवेश सूचना

श्रमण परम्परा के उन्नायक आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के शुभाशीर्वाद एवं मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज की मंगल प्रेरणा से संचालित श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर का आठवाँ शैक्षणिक सत्र ७ जुलाई, २००४ से प्रारम्भ होगा। छात्रों को लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक संस्कार भी प्रदान किये जाते हैं। यहाँ छात्रों को आवास, भोजन व पुस्तकादि की नि:शुल्क व्यवस्था के साथ खेलकूद के लिये विशाल प्रांगण, कम्प्यूटर शिक्षा एवं अंग्रेजी भाषा की प्रवीणता के लिये प्रशिक्षित शिक्षकों की व्यवस्था, प्रतियोगी परीक्षाओं के लिये विशेष दिशा निर्देश की भी सुविधा उपलब्ध है। इच्छुक छात्रों को समय-समय पर विधि विधान, वास्तुशिल्प विज्ञान एवं ज्योतिष का भी प्रशिक्षण दिया जाता है।

इसमें सम्पूर्ण भारत से प्रवेश के लिये अधिक छात्र इच्छुक होने से विभिन्न प्रदेशों के लिये स्थान निर्धारित हैं। अत: स्थान सीमित है। धार्मिक अध्ययन सहित कुल पाँच वर्ष के पाठ्यक्रम में दो वर्षीय उपाध्याय परीक्षा (सीनियर हायर सैकेण्डरी के समकक्ष) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर से एवं त्रिवर्षीय शास्त्री स्नातक परीक्षा (बी.ए. के समकक्ष) राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध है। जो सरकार द्वारा आई.ए.एस. और आर.ए.एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मलित होने के लिए मान्य है।

जिन छात्रों ने १०वीं की परीक्षा (अंग्रेजी सहित) दी है अथवा उत्तीर्ण कर ली है तथा जो प्रवेश के इच्छुक हैं वे संस्था से नि:शुल्क प्रवेश आवेदन पत्र मंगाकर १५ जून, २००४ तक निम्न पते पर अवश्य भेज देवें।

डॉ. शीतल चन्द जैन
निदेशक
श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान
वीरोदय नगर, सांगानेर, जयपुर (राज.)

शोक समाचार

कवि, लेखक, कहानीकार, 'अहिंसा वाणी', 'वॉयस ऑफ अहिंसा' के संपादक श्री वीरेन्द्र प्रसाद जैन 'दादा जी' का दिनांक ५ मार्च २००४ को आकस्मिक निधन हो गया है। 'जिनभाषित ' परिवार विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

संसार में अपने को महान सिद्ध करने की इच्छा या अपना नाम या अस्तित्त्व स्थापित कर देने की इच्छा यदि नष्ट हो जाये, तब से व्रत प्रारम्भ करने का अधिकारी हो सकता है। अपने भावों को खोजो, यदि वह इच्छा है, तब व्रत का ढोंग है। यदि कल्याण चाहते हो तो पहले योग्य तर्कणाओं से उस इच्छा की भी होली कर दो।

क्षु. सहजानंद मनोहर वर्णी जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मरण सुधारना अपने हाथ में है'

मुनि श्री सुधासागर जी

अलवर, २४ जुलाई। 'जन्म देना प्रभु के हाथ में है परन्तु मरण सुधारना हमारे अपने हाथ में है। हमें कैसे मरना है, यह हम तय कर सकते हैं रोते हुए मरना है या हँसते हुए जाना है, यह हमारे हाथ में है। जो शक्ति भगवान के पास है वही शक्तियाँ हमारे भी पास हैं, प्रकृति ने कोई भेद नहीं किया है। यहाँ तक कि पशु-पक्षी, तिर्यंच, पेड़-पौधे तक के पास वही शक्तियाँ विद्यमान हैं। प्रकृति ने सबको समान शक्ति प्रदान की है। प्रकृति के सिद्धांत पक्षपात से रहित हैं। सबको जन्म-मरण प्रकृति ने अपने कर्मों के अनुरूप दिया है किन्तु मानव देह पाकर भी यदि अपने मरण को नहीं सुधारा तो यह दोष प्रभु का नहीं बल्कि अपने खुद का है। जो जाग गया वह मरण को भी महोत्सव बना सकता है।'

उन्होंने कहा कि रावण और विभीषण एक माँ से ही जन्मे थे परन्तु दोनों के मार्ग अलग थे। रावण दुराचार फैलाने का पक्षधर था वहीं विभीषण सदाचार का हमराही था। उसकी परिणति भी सामने है, कि राम ने रावण का गला उतार दिया और विभीषण को गले लगा लिया। एक का मरण सुधर गया वहीं दूसरे का बिगड़ गया। अपना मरण कोई दूसरा नहीं विगाड़ता बल्कि हम खुद उसके कारण हैं। याद रहे कर्म में कभी कोई साझीदारी न हुई और न होगी। जो जैसा करेगा, वैसा पाएगा यही शाश्वत सत्य है।

मुनिश्री ने कहा कि फूल की तरह हमारी यह जिन्दगी है। एक डाली पर खिलता हुआ फूल भगवान श्री के चरणों में अर्पित होता है, एक फूल किसी के गले का हार बनता है, एक फूल डाली पर ही सूख व सड़कर नष्ट हो जाता है। नष्ट सभी होते हैं परन्तु फूलों के भी अपने-अपने कर्म हैं। उसी तरह मिट्टी के अंदर घड़े बनने की योग्यता पहले भी थी, आज भी है किन्तु जब तक किसी मिट्टी को कुम्हार का निमित्त नहीं मिलेगा, तब तक मिट्टी ही है। जब निमित्त मिलता है, तब वही मिट्टी अपनी नियत को परिवर्तन कर घड़ा ही नहीं बल्कि मंगल कलश तक का सौभाग्य पाती है। इसीतरह जिन्हें संत-समागम का निमित्त मिलता है, वे अपनी आत्मा का स्वभाव पहचान लेते हैं। संत हो या गुरु वह जगाने आता है, किसी की तकदीर नहीं बदल सकता। वह अंगुली दिखाता है कि वह मार्ग मोक्ष का है। गुरु कभी अंगुली पकड़कर चलना नहीं सिखाता बल्कि वह तो सही दिशा बताता है परन्तु दृष्टि खुद को बदलना पड़ेगी तभी मंजिल तक पहुँच पाओगे।

मुनिराज ने कहा कि सिद्ध परमेष्ठी भगवान भी किसी को कुछ दे नहीं सकते । धर्म किसी को दिया नहीं जाता बल्कि वह तो जगाने का काम करता है। जो धर्म को धारण करता है वही सदाचार जीवन के पुष्प महका सकता है। हर स्त्री-पुरुष की आत्मा में अनन्त शक्ति भरी पड़ी है। जैसे पृथ्वी की कोई सीमा नहीं, उसीतरह आत्मा का आनंद भी अनन्त है जिन्हें देव-गुरु-शास्त्र का निमित्त मिल पाता है, फिर वे संसार के दास नहीं बल्कि अपनी आत्मा के पुजारी बन जाते हैं। मुनिराज ने दुःख जताते हुए कहा कि आज का आदमी कोल्हू के बैल की तरह दिन-रात मकान से दुकान और दुकान से मकान के चक्कर लगाने में ही अपना जीवन गंवा रहा है। रोटी पकाना, खाना और पाखाना यह कोई बड़ी बात नहीं बल्कि धर्म कमाना बड़ी बात होगी। राम ने जीवन भर जंगल में काटे परन्तु उनके पास धर्म का खजाना था तभी वे मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाए।

रावण के पास सोने की लंका थी परन्तु जिसके पास धर्म था वह 'राम' आज भी घट-घट में मौजूद हैं, परन्तु सोने की लंका का मालिक आज भी दानव कहलाता है। हमें क्या बनना है, क्या पाना है, कहाँ जाना है, मरण को सुधारना है या बिगाड़ना है, यह हमें ही तय करना पड़ेगा। उसी के अनुरूप हमें परिणाम मिलेंगे।

'अमृतवाणी' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल /588/2003

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज पर विशेष मोहर

सागर (म.प्र.) में भाजपा नेत्री, सांसद सुश्री उमाश्री भारती वर्तमान मुख्यमंत्री म.प्र. आचार्य श्री विद्यासागर जी के चरणों में श्रीफल समर्पित करते हुए।

स्वामी, प्रकाश एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-1, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205 प्रोफेसर कॉलोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org